केरल ज्योति

ISSN 2320-9976
Reference Resource Journal

जनवरी 2026

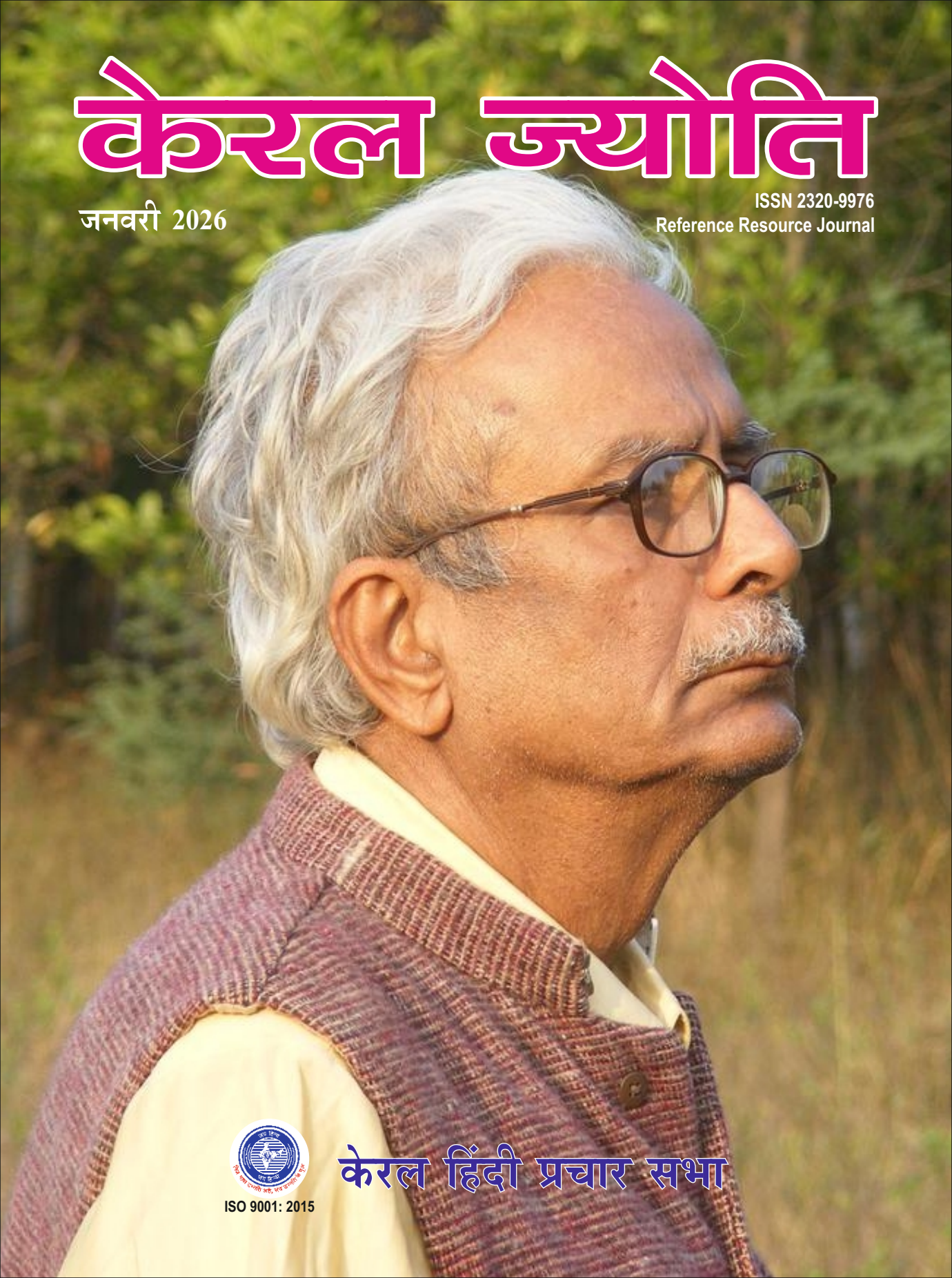

केरल हिंदी प्रचार सभा

ISO 9001: 2015

केरल हिन्दी प्रचार सभा में आयोजित क्रिस्तुमस समारोह का उद्‌घाटन कर रहे हैं फादर सुनिल मेरी जॉन।

सभा के मंत्री अधिवक्ता डॉ.मधु बी स्वागत भाषण कर रहे हैं।

पुष्प : 62 दल : 10 अंक: **जनवरी 2026**

केरलज्योति

केरल हिंदी प्रचार सभा की मुख पत्रिका

(केंद्रीय हिंदी निदेशालय की वित्तीय सहायता से प्रकाशित)

केरल हिंदी प्रचार सभा के संस्थापक

स्व. के वासुदेवन पिल्लै

पूर्व समीक्षा समिति

प्रो (डॉ) एन रवींद्रनाथ
डॉ के एम मालती
प्रो(डॉ) आर जयचन्द्रन
प्रो (डॉ) जयश्री एस आर

परामर्श मंडल

डॉ तंकमणि अम्मा एस
डॉ लता पी
डॉ रामचन्द्रन नायर जे

प्रबन्ध संपादक

गोपकुमार एस (अध्यक्ष)

मुख्य संपादक

डॉ एम एस विनयचंद्रन

संपादक

डॉ रंजीत रविशैलम

संपादकीय मंडल

अ धवक्ता मधु बी (मंत्री)
सदानन्दन जी
मुरलीधरन पी पी
प्रो रमणी वी एन
चन्द्रिका कुमारी एस
एल्सी सामुवल
आनन्द कुमार आर एल
प्रभन जे एस
डॉ नेलसन डी

प्रकाशन संयोजिका

अर्चना एस

सूचना : लेखकों द्वारा प्रकट किये गये मत उनके अपने हैं। उनसे संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।

अनुक्रमणिका

संपादकीय 5

मिलके चलो, मिलके बोलो - **अधिवक्ता (डॉ) बी मधु** 6

राजा रविवर्माचरित महाकाव्य – **प्रो.डी.तंकप्पन नायर** 7

दर्शन माला - **डॉ नेलसन डी** 9

पुस्तकों का प्रणेता कलाम - **डॉ लक्ष्मी एस एस** 11

फिजी गणराज्य में आयोजित 12 वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन
डॉ दुर्गारत्ना सी 14

आधुनिक परिवेश में परिवार - **प्रो संजय एल मादार** 19

सामसिक संस्कृति की रचना में सूफ़ियों की भूमिका :
'दिनकर साहित्य' की दृष्टि में - **चिराग राजा** 22

आधुनिकता का पुनर्पाठ : स्त्री लेखन के संदर्भ में
डॉ संगीता नायर / डॉ जेस्टिन के कुरियाकोस 25

युवा पीढ़ी और जागृति - **दीप्ति जे पणिक्कर** 29

केरल की लब्धप्रतिष्ठ हिंदी लेखिका प्रो (डॉ) एस तंकमणि अम्मा -
व्यक्तित्व और सृजन वैभव - **डॉ रंजिता राणी** 31

'शिफ्ट, कंट्रोल, ऑल्ट उ डिलीट' भूमण्डलीकृत समय में 'डिलीट'
होती संवेदना की कहानी - **पंकज पाण्डेय / डॉ राशि पाण्डे** 35

उषा यादव के उपन्यासों में परिवार का चित्रण - **रेशमा एस** 40

स्त्री-मन, पितृसत्ता और पहचान का बहुस्तरीय विमर्श-**डॉ अर्चना रानी** 44

अस्मिताई संकट-चयनित हिंदी कहानियों के संदर्भ में-**डॉ सौम्या सी एस** 50

मानस कैलास **मूलः मंजु वेल्लायणि**
अनुवाद : प्रो. डी. तंकप्पन नायर, डॉ.रंजीत रविशैलम 52

देवयानम् (आत्मकथा)
मूल : डॉ.वी.एस. शर्मा, अनुवाद : प्रो. के.एन.ओमना 54

ज़िंदगी : एक लोलक (आत्मकथा) 56
मूल : श्रीकुमारन तंपी अनुवाद : डॉ.पी.जे.शिवकुमार

प्रश्नोत्तरी - **डॉ. रंजीत रविशैलम** 58

मुखचित्र :कीर्तिशेष विनोदकुमार शुक्ल (1.1.1937 – 23.12.2025)
ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता।

लेखकों से निवेदनः

• हिंदी और इतर भारतीय भाषाएँ, साहित्य, संस्कृति आदि पर लिखी गई उच्च स्तरीय मौलिक एवं अप्रकाशित रचनाएँ आमंत्रित हैं। • भाषा, साहित्य, संस्कृति आदि पर आयोजित समारोहों, चर्चाओं, संगोष्ठियों के समाचारों का भी स्वागत है। इन समाचारों को प्रस्तुत करने वाले का नाम और पूरा पता भी लिख भेजें। • भारतीय भाषाओं से अनूदित कविता, कहानी भी भेजें। उनके साथ मूल लेखक से प्राप्त अधिकार पत्र भी प्रेषित करें। • प्राकाशनार्थ रचनाएँ साफ-साफ अक्षरों में लिखकर अथवा टंकित कर या **डी.टी.पी.** करके **सी.डी.** में भेजें। कृपया कार्बन प्रति न भेजें। • स्वीकृत रचनाएँ यथासमय पत्रिका में प्रकाशित की जाएँगी। • आप ई-मेल द्वारा भी अपनी रचनाएँ भेज सकते हैं। ई-मेल में Microsoft Word or Pagemaker#फाइल में भेजिए। ई-मेल आईडी :khpsabha12@gmail.com • अपनी रचना के साथ पूरा पता (जिला, राज्य और पिनकोड सहित), लघु परिचय और फोटो भी भेजें।

संपादक, 'केरल ज्योति', केरल हिन्दी प्रचार सभा,
तिरुवनन्तपुरम-695 014

सभा का मुख्यालय और उसकी गतिविधियाँ

केरल की राजधानी तिरुवनंतपुरम के वषुतक्काड में सभा का मुख्यालय स्थित है। सभा के मुख्य परिसर में सभा के संस्थापक मंत्री की पावन स्मृति में श्री वासुदेवन पिल्लै स्मारक हिंदी ग्रंथालय, स्नातकोत्तर अध्ययन अनुसंधान केंद्र, साहित्याचार्य महाविद्यालय, केंद्रीय हिंदी महाविद्यालय, टंकण और आशुलिपि संस्थान, परीक्षा भवन, राष्ट्रवाणी मुद्रणालय, राष्ट्रज्योति पब्लिशेर्स के प्रकाशन अधिकारी का कार्यालय, हिंदी अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालय (बी.एड) और केरल विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त शोध केंद्र हैं।

विज्ञापन दर (साधारण अंक)

	मासिक	वार्षिक
आवरण पृष्ठ 4 (रंगीन)	रु.2500.00	25,000.00
आवरण पृष्ठ 2 एवं 3 (रंगीन)	रु.2000.00	20,000.00
साधारण पृष्ठ पूरा	रु.1000.00	10,000.00
साधारण पृष्ठ 1/2	रु.600.00	6,000.00
साधारण पृष्ठ 1/4	रु.350.00	3,500.00

एक प्रति का मूल्य रु. 40/- ***आजीवन चंदा : रु. 4000/-*** ***वार्षिक चंदा : रु. 400/-***

A /c No. 57022786007 IFS Code : SBIN0070033
State Bank of India, Vazhuthacaud Branch

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें : मंत्री, केरल हिन्दी प्रचार सभा, वषुतक्काडु, तिरुवनन्तपुरम-695 014.
दूरभाष:0471-2321378, 2329200, 2329459. फैक्स:0471-2329200 ई-मेल : khpsabha12@gmail.com

दूरभाष : 0471-2321378, 2329200, 2329459
फैक्स : 0471-2329459
मोबाईल: संपादक : 7898515222/ 9447657301

khpsabha12@gmail.com
www.keralahindipracharsabha.in

केरलज्योति
सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका
जनवरी 2026

संपादकीय

विश्व-हिंदी की महायात्रा

दुनिया की जो भी भाषाएँ विकास के दौर में आगे आई हैं, अपनी प्रयोजनमूलकता के कारण प्रतिष्ठित हुई हैं। वैश्विक परिवेश के कारण आज हिंदी राष्ट्र-व्यापी ही नहीं, विश्व-व्यापी हो गई है। वह किसी प्रांत विशेष की भाषा न होकर सार्वदेशिक होती जा रही है। भूमंडलीकरण के दौर में उच्च प्रौद्योगकी और संचार माध्यमों की बदौलत हिंदी-प्रयोग-क्षितिज का विशाल फ़लक बढता चला जा रहा है। आज वाणिज्य, प्यापार, कला, संगीत, शिक्षा, परिवहन, पर्यटन, साहित्य आदि विभिन्न क्षेत्र में हिंदी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रतिपल फल फूल रही है।

आज की दुनिया को एक विश्वबस्ती कहें तो भी अत्युक्ति नहीं है। विज्ञान के चमत्कारों ने देशों की दूरियाँ कम कर दी हैं। डॉ.ऋषभ देव शर्मा का मत प्रासंगिक है-'आज इक्कीसवीं शताब्दी की भूमंडलीकृत दुनिया में यह तथ्य महत्वपूर्ण हो गया है कि भारत दुनिया भर के उत्पाद-निर्माताओं के लिए एक बडा खरीददार और उपभोक्ता बाज़ार है। ताकि भूमंडलीकृत मंडी की भाषा के रूप में हिंदी की अतिशय लोकप्रियता हुई है।' अपनी समावेशी प्रवृत्ति के कारण तथा संचार-माध्यमों के कारण हिंदी अपनी स्वीकार्यता का विस्तार करती दिखाई दे रही है।

हिंदी के अध्ययन की सुविधा वर्तमान में भारत से बाहर विश्व में कई विश्वविद्यालयों में उपलब्ध है। सर्वेक्षण के अनुसार करीब एक सौ पचास विश्वविद्यालयों में अब हिंदी पाठ्यक्रम चालू है। अमरिका में 113 विश्वविद्यालयों में एवं कॉलेजों में हिंदी अध्ययन केन्द्र हैं। पेनसिलवेनिया यूनिवेसिटी ने एम.बी.ए के छात्रों के लिए हिंदी का दो वर्षीय कोर्स अनिवार्य कर दिया है ताकि अमरिका को भारत में व्यापार बढाने में भाषा संबधी कठिनाईयाँ न हो जाएँ। बारहवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन विगत 2023 फरवरी 15,16,17 को फिजी में विदेश मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा आयोजित किया गया। इसी सम्मेलन में केरल हिंदी प्रचार सभा को भी 'विश्व हिंदी सम्मान' से पुरस्कृत किया गया था।

सितंबर 14, को हम हिंदी दिवस एवं जनवरी 10 को विश्व हिंदी दिवस मना रहे हैं। उत्सव धर्मिता से हिंदी के नाम पर संगोष्ठियाँ आयोजित कर हम तो खुश हो जाते हैं। परन्तु हिंदी उसी तरह सिसकती चली रह जाती है। विडंबना की बात यह है कि हमारी भाषा अपना यथोचित सम्मान पाने के लिए 75 वर्षों से अधिक तडप रही है। सम्मेलन सत्रों में अनुशंसाओं का प्रस्तावित होना सुखद अवश्य है परंतु इसकी सार्थकता तो तभी होगी जब इसका कार्यान्वयन हो पाएगा।

हिंदी के माध्यम से संपूर्ण विश्व भारतीय संस्कृति को आत्मसात कर रहा है। कंप्यूटिंग व मृदुसामग्रियों (सोफ्टवेयर) के बदलते चरण में हिंदी की बडी वृद्धि तो रोज़ हो रही है।

फिर भी नामी हिंदी लेखक प्रभाकर श्रोत्रिय जी के शब्दों में कहूँ-'हिंदी अपने घर में प्रवासिनी है।'

कहावत भले ही हो-'घर में दिया जलाकर मंदिर में दिया जलाया जाए।'

डॉ. एम.एस. विनयचंद्रन
(मुख्य संपादक)

मिलके चलो, मिलके बोलो

अधिवक्ता (डॉ) बी मधु

"संगच्छध्वम् संवदध्वम्" - ऋग्वेद की पंक्ति है।

यह तभी संभव है जब यहाँ की सारी जनता का मन एक हो। एकीकरण का महामंत्र है भाषा। इसी के माध्यम से मनुष्य - मनुष्य का संपर्क हो जाता है। देश को एक सूत्र में बाँध रखने के लिए एक भाषा की आवश्यकता है। बहु-भाषा-भाषी भारतीयों के मन को एक करने की क्षमता सिर्फ हिंदी में है।

हिंदी भाषा के विकास में समाज और संस्कृति की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। हिंदी की ऐतिहासिक विकास यात्रा का परिचय देना यहाँ संगत नहीं। इतना मात्र सूचित करूँ - ' किसी भी राष्ट्र के विकास के लिए भाषा-शक्ति आधार का काम करती है। किसी भी देश की सामाजिक आर्थिक सांस्कृतिक प्रगति में उस देश की भाषा का अहम योगदान है। संपूर्ण राष्ट्र की एकता और अखंडता की महत्वपूर्ण कडी होती है भाषा। किसी सुदृढ़ राष्ट्र की पहचान इस बात से भी होती है कि उसकी अपनी भाषा कितनी व्यापक एवं समृद्ध है।

हिंदी का शानदार इतिहास है। उसके पास समृद्ध शब्द संपदा है। उसकी लिपि देवनागरी विश्व की श्रेष्ठ और पूर्ण वैज्ञानिक लिपि है। वैश्विक परिवेश ने ही हिंदी को विश्वभाषा बनाया। प्रौद्योगिकी, वेब लेखन, मशीनी अनुवद, इंटरनेट द्वारा ऑनलाइन अनुवाद आदि क्षेत्र में भी हिंदी की बड़ी संभावनाएँ हैं। निश्चय ही हिंदी अपने बलबूते पर विश्व-पटल पर विस्तार पा रही है। परंतु खेद की बात है कि कुछ दकियानूसी और अदूरदर्शी सोच वाले ही हिंदी के प्रति अपने यहाँ नकारात्मक भाव व्यक्त कर रहे हैं।

महात्मा गाँधी ने कहा था - 'राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूँगा है।' राष्ट्र ध्वज, राष्ट्र गीत आदि की भाँति राष्ट्रभाषा का भी सम्मान होना चाहिए। राजभाषा के रूप में हिंदी को संवैधानिक मान्यता प्राप्त है। यह तो दूसरी बात है कि हिंदी के प्रगामी प्रयोग का सार्थक कार्यान्वयन जारी रहता है कि नहीं! किसी ने कहा भी है - 'कागज़ी गाय घास नहीं खाती' परंतु संविधान के प्रति निष्ठा रखना हम सभी का नैतिक कर्तव्य ही है।

इसी संदर्भ में बता दूँ कि आजकल भाषा विषयक राष्ट्रीय विमर्श चल रहा है। स्वाधीन भारत में किसी एक सर्वमान्य राष्ट्रभाषा (जोकि हिंदी ही हो सकती है) का संवैधानिक स्वरूप न बन पाना बेहद चिंतनीय और विश्व पटल पर शर्मनाक भी है। प्रत्येक हिंदी प्रेमी को इस सकारात्मक अभियान से जुडकर विचार करना चाहिए।

अधिवक्ता(डॉ) मधु बी
मंत्री

नये साल एवं गणतंत्र दिवस की मंगलकामनाएँ!

राजा रविवर्माचरित महाकाव्य

प्रो.डी.तंकप्पन नायर

छठा सर्ग
जन्म और बाल्य

1. नीलकंठन भट्टतिरिप्पाडु और उमांबा बाई को नहीं हुई सन्तानें
शादी के बाद अनेक वर्षों तक और उनके सीमंत पुत्र थे रविवर्मा
जिनका हुआ था जन्म अठारह सौ अड़तालीस अप्रैल उनतीस को
बड़ी प्रतीक्षा के बाद और इसलिए खुशी लहरायी पूरे परिवार में ।

2. रविवर्मा जन्मे संगीत के वातावरण में किन्तु रुचि थी उनकी
प्रारंभ से ही रंगों से और संगीत और लोरी सुनते समय बच्चे का
ध्यान नहीं पड़ता था उनपर और पड़ता था शिशु का ध्यान रंगबिरंगी
वस्तुओं पर जिस पर ज़्यादा महत्व न दिया उस समय किसी ने भी ।

3. बाद में परिवारवालों का ध्यान पड़ा इसपर कि
रुचि नहीं थी बच्चे की इन बातों पर बल्कि सदा ही
ध्यान पड़ता है उसका रंगबिरंगी चीज़ों पर और जब तल्लीन
होता है ऐसी वस्तुओं पर तब भूल जाता है अपनी माँ को भी।

4. स्तनपान करते समय भी आत्मविस्मृत हो रंगों पर
पड़ती थी उसकी आँखें और ऐसी बातें सुनने को
मिलती हैं हमें पीढ़ियों दर पीढ़ियों के मुँह से कि
रविवर्मा का बाल्यकाल था भरा रोचक घटनाओं से।

5. दादी माँ के खींचे चित्र और माँ के मुँह से निकलती
स्वरमाधुरी और पिता के भारतीय दार्शनिक विचारों को
देखते-सुनते पलनेवाले रविवर्मा के मन में होने लगा
उदय एक नये कला-बोध का और गाढ प्रणय रंगों से।

6. प्रारंभ हुई रविवर्मा की शिक्षा पाँचवें साल की आयु में ही
और उस समय प्रारंभिक शिक्षा नहीं होती थी मलयालम में
बल्कि होती थी संस्कृत में और उन्हें प्राप्त हुआ तीन सालों में
ज्ञान मलयालम और संस्कृत अच्छी तरह पढ़ने व लिखने का ।

7. तदनन्तर पढ़ने लगे वे संस्कृत मुख्य विषय के रूप में
और शुरू किया पढ़ना सिद्धरूप, बालप्रबोधनं, श्रीरामोदन्तम्
आदि संस्कृत ग्रंथों को और हर एक विषय के पंडित
विशेष ध्यान देते थे रविवर्मा की पढ़ाई में उत्साह पूर्वक।

8. संस्कृत के अध्ययन से बड़ा प्रभाव पड़ा पुराण कथाओं का रविवर्मा के मन में और पुराण कथाओं के काल्पनिक लोक एवं पात्रों के रूप-भावों की ओर जागी उनकी कल्पना और पायी क्षमता भागवत और रामायण अच्छी तरह पारायण की।

9. माता ने चाहा पुत्र को कलाकार बनते देखना और विशेष ध्यान दिया बच्चे की रुचि पहचानकर प्रोत्साहित करने में किंतु चाहते थे पिता उसे महापंडित एवं कवि बनते देखना और चाहा भगवान ने विश्वविख्यात चित्रकार बनने को।

10. पूराण कथाओं में अतीव तत्पर थे रविवर्मा और वे उतारने लगे चित्रों में माता से सुनी कथाओं को और चित्र खींचते थे रंगीन खड़ियाओं एवं कोयलों के टुकड़ों से राजमहल के कोनों में और भीतर की दीवारों पर लगातार उत्साह से।

11. रविवर्मा के मामा थे किलिमानूर राजमहल के बड़े राजा और विख्यात चित्रकार राजराजवर्मा और उन्होंने महल की दीवारों में बने चित्रों के निशाने देखे और पता लगाया वृद्ध सेवक से कि किसने खींचे थे ये चित्र।

12. घबराहट से और दंड के भय से बड़े अदब से खड़े सेवक से कहा शान्त भाव से राजराजवर्मा ने कि डरो मत, बताओ कि किसने खींचे ये चित्र और जवाब में कहा वृद्ध सेवक ने कि हुजूर, समझाया मैंने छोटे राजा को और सफाई भी की भित्तियों की।

13. क्या करें फिर भी वे करते थे यही और ये निशाने हैं सफाई करने के बाद के और हम अभी साफ़ करेंगे यह सुनकर बताया महाराज ने कि ठीक है आगे छोटे राजा के खींचे चित्रों को साफ़ करने के पहले बताना चाहिए था मुझे ।

14. इस बात पर दुःख हुआ था सेवकों को कि दण्ड मिलेगा छोटे राजा को और यह बात बताई एक सेवक ने रविवर्मा को और सेवकों ने समझाया बालक को कि छोटा राजा, आइंदा भित्ति में चित्र मत खींचना, महाराज ने उनको बताने को कहा है चित्र खींचने पर।

15. चित्र खींचने पर मिलेगा आपको दण्ड सुनकर रविवर्मा ने सिर हिलाया और सेवकों ने देखा कुछ दिनों के बाद कि भरी हुई हैं सारी भित्तियाँ चित्रों से और सेवकों ने की शिकायत महाराज से तो कहा उन्होंने कि ठीक है, मैं देख लूँगा। (क्रमशः)

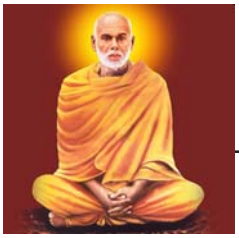

दर्शन माला

डॉ नेलसन डी

अध्यारोप दर्शन

(केरल के महान संत, ऋषि-कवि, समाज सुधारक श्रीनारायणगुरु द्वारा संस्कृत में रची गई वेदांत-संबंधी रचना है 'दर्शनमाला।' दस-दस श्लोकों के दस भाग इसमें समाहित हैं। मुनि नारायण प्रसाद की मलयालम-व्याख्या का हिंदी भाषांतरण डॉ नेलसन डी ने तैयार किया है। - संपादक)

2

(पूर्व प्रकाशित से आगे)

जैसे बीज की सत्ता वैसे ही अंकुर की सत्ता भी अनिषेध्य है। बीज से अंकुर बना और आगे बढ़कर वृक्ष। लेकिन बीज के भीतर छिपे रहने वाले वृक्ष की खोज करने के लिए कोई बीज तोड़कर देखेगा तो वहाँ वृक्ष नहीं दिखाई देगा। बीज में केवल एक साध्य के रूप में वृक्ष रहता है। अनुकूल वातावरण में वह स्वयं खिल जाता है और अंकुर बढ़कर वृक्ष नहीं दिखाई देगा। बीज में केवल एक साध्य के रूप में वृक्ष रहता है। अनुकूल वातावरण में वह स्वयं खिल जाता है और अंकुर बढ़कर वृक्ष बन जाता है। बीज की सत्ता ने ही वृक्ष की सत्ता का रूप धारण किया। इसी प्रकार प्रपंच, ईश्वर अथवा आत्मरूपी आदि-कारण स्वयं व्याकृत होने वाला है। अर्थात् किसी भी प्रकार का रूप धारण किए बिना ही आदि-कारण के रूप में ईश्वर अव्याकृत सत्य है।

बीज स्वयं विकास पाकर वृक्ष बन गया। इसी तरह ईश्वर अथवा आत्मरूपी सत्य स्वयं प्रपंच के रूप में खिलकर चमक गया। उलटे में कहें तो यह प्रपंच, ईश्वररूपी केवल-सत्य का हाथ आया हुआ दिव्य शरीर है। अतः नारायणगुरु कहते हैं - करण, इंद्रिय और कलेवर से/इंद्रियगोचरनेक जगत सारा।/पर आकाशे उदित भानुमान-दिव्य / देह हो, समझो जाँच के भीतर सै।। (आत्मोपदेश शतक श्लोक 2)

इस प्रकार आदि-कारण सत्य स्वयं रूप लेकर विश्व बन गया है जिसे सर्जन कहते हैं। 'सृष्टि' कहने पर भी यह अंग्रेज़ी में 'क्रिएशन' कहने वाली सृष्टि नहीं है। जब कुम्हार कुछ मिट्टी लेकर उससे घट बनाता है तब वह घट का सृष्टि-कर्ता है। लेकिन बिना कुम्हार के मिट्टी स्वयं घट का रूप धारण कर सकती है तो वह सर्जन हो गई। एक में विलीन कार्य स्वयं प्रकट होना सर्जन है। उसके लिए स्रष्टा नहीं चाहिए। सर्जन की शक्ति उसके भीतर ही मौजूद है। उस शक्ति के बारे में आत्मोपदेश शतक में नारायणगुरु ने बताया है कि - मौजूद इसमें आदि शक्ति इस सकल/ दृश्य प्रपंच को जन्म देता है आदि बीज। बीज से अंकुर बनने वाली शक्ति बीज में ओझल रहती है। इसी प्रकार ईश्वर से विश्व सर्जित होने की शक्ति ईश्वर में ही रहती है। इस प्रकार सर्जित विश्व तो ईश्वर की सत्ता से ज़रा भी अलग नहीं

है। अतः गुरु कहते हैं - तू ही है सृष्टि और स्रष्टा, सृष्टि-जाल भी तू है/ हे ईश्वर ! तू ही सृष्टि-सामग्री भी बन गया। (दैवदशक पद्य 6)

केवल वातावरण अनुकूल होते समय बीज से अपने आप अंकुर बनता है। किसी भी बाह्य शक्ति की प्रेरणा उसके लिए आवश्यक नहीं है। इसी प्रकार संसार तो ईश्वर से रूप धारण करते हुए आता है। बीज के कार्य में उसे उग जाने का अनुकूल वातावरण होना चाहिए। ईश्वर में वह वातावरण हमेशा स्वाभाविक है। अतः ईश्वर को स्वयं उगे हुए इस विश्व का रूप धारण न करने वाला एक क्षण भी नहीं होता। वहाँ फूटकर कुंभ होने की प्रक्रिया अपने आप होती है।

यहाँ कहा गया है कि बीजांकुर के समान ईश्वर स्वयं उग गया है, फिर भी ऐसा न सोचें कि एक खास क्षण में इस प्रकार हुआ। वह प्रक्रिया हमेशा चलती जा रही है। इसके बिना ईश्वर की कोई सच्चाई है ही नहीं। सभी प्रपंच प्रतिभासों से अलग रहने वाले ईश्वर के बारे में हम कल्पना कर सकते हैं; फिर भी हम नहीं मान सकते कि हमारी कल्पनाओं की तरह का एक ईश्वर कहीं रहता है; कभी रहता था।

निर्मित विश्व के बिना ईश्वर की कोई वास्तविकता नहीं होती। बिना ईश्वर के विश्व की भी कोई वास्तविकता नहीं होती। यहाँ 'बाद में सृष्टि की' (अथ वै असृजत्) कहते समय ऐसा मतलब होने का आभास होता है कि किसी एक खास समय पर प्रपंच की सृष्टि की गई। वह इस अध्याय के विचार-प्रकरण का भाग होकर आने वाला मात्र है। अन्य अध्यायों में प्रवेश करते समय ऐसा दिखाई देता है कि इस अनुभूति का सुधार हुआ है। भगवद्गीता के अनुसार बिना सत् के भाव नहीं और बिना भाव के सत् भी नहीं है। बिना स्वर्ण के गहना नहीं और गहना या अन्य किसी रूप के बिना स्वर्ण भी नहीं है।

जिस प्रकार गहने का रूप देने वाली संभावना स्वर्ण में निहित है उसी प्रकार खिलकर अंकुर होने की शक्ति बीज में निहित है। उसी प्रकार विश्व का रूप धारण करने की शक्ति ईश्वर में निहित है। अगले श्लोक में अवतरित दर्शन इस शक्ति का विवरण देने वाला है।

4

शक्तिस्तु द्विविधा ज्ञेया तैजसी तामसीति च।
सहवासोऽनयोर्नास्ति तेजस्तिमिरयोरिव।।

शक्तिः तू - कहीं गई शक्ति तो; तैजसी तामसी च इति - तैजसी और तामसी इस प्रकार; द्विविधा - दो प्रकार से; ज्ञेया - जाना जाता है; तेजस्तिमिरयोः इव - रोशनी और अंधेरे के समान; अनयोः - इन दोनों का; सहवासः न अस्ति - एक साथ अस्तित्व नहीं।

यहाँ कही गई शक्ति तो तैजसी और तामसी होकर दो प्रकार की होती है। जिस प्रकार रोशनी और अंधेरा एक साथ नहीं रहते उसी प्रकार ये दोनों शक्तियाँ कभी एक साथ नहीं रह सकतीं।

(क्रमशः)

पुस्तकों का प्रणेता कलाम

डॉ लक्ष्मी एस एस

देश में जन्मे प्रत्येक व्यक्ति को राष्ट्र निर्माण के प्रति समर्पण का भाव रखना ही सच्ची राष्ट्र सेवा है। ऐसी सच्ची राष्ट्र सेवियों में एक है ए.पी.जे अब्दुल कलाम। अवुल पकिर जैनुलाब्दीन अब्दुल कलाम जो मिसाइल मैन और जनता के राष्ट्रपति नाम से भी जाने जाते हैं, भारतीय गणतंत्र के ग्यारहवें निर्वाचित राष्ट्रपति थे। वे भारत के पूर्व राष्ट्रपति, जाने माने वैज्ञानिक और अभियंता के रूप में विख्यात थे।

उन्होंने भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वे कई परियोजनाओं के नेतृत्व में थे, जिनसे समाज को बहुत लाभ पहुँचा। उन्होंने अग्नि और पृथ्वी मिसाइलों के विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान किया।

15 अक्तूबर 1931 को धनुष कोडी गाँव (रामेश्वरम, तमिलनाडु) में एक मध्यमवर्ग मुस्लिम परिवार में इनका जन्म हुआ था। अब्दुल कलाम के जीवन पर इनके पिता का बहुत प्रभाव रहा। उन्होंने अपनी आत्मकथा में बचपन के बारे में स्पष्ट लिखा था। उनके पिता अधिक पढे-लिखे नहीं थे। वे बहुत धनवान भी नहीं थे पर बहुत बुद्धिमान और खुले विचारों के थे। वे संयुक्त परिवार में रहते थे। उनकी माँ आशियम्मा सबके लिए खाना तैयार करती थी। उनके पिता को दिखावा पसंद नहीं था अतः घर में आवश्यक चीज़ें ही होती थीं। उनका बचपन बेफिक्री और सादेपन में बीता था। वे प्रायः अपनी माँ के साथ ही रसोई में ज़मीन में बैठकर खाना खाया करता था। वे उनके सामने केले का पत्ता बिछाती और फिर उसपर चावल और सुगंधित, स्वादिष्ट साँभर देती, साथ में घर का बना अचार और नारियल की ताज़ा चटनी भी होती। उनके घर के कुछ मील दूर ही रामेश्वरम शिव मंदिर था, वहाँ के प्रमुख पुजारी लक्ष्मण शास्त्री अब्दुल कलाम के पिता के अभिन्न मित्र थे। कलाम के बचपन में उनके तीन पक्के दोस्त थे - रामानंद, अरविंदन और शिवप्रकाशन। रामानंद शिव मंदिर के पुजारी लक्ष्मण शास्त्री जी का बेटा था। बडे होने पर रामानंद अपने पिता के स्थान पर उसी मंदिर का पुजारी बना। अरविंदन ने तीर्थयात्रियों को घुमाने के लिए टेंपो चलाने का कारोबार कर लिया था। शिवप्रकाशन दक्षिण रेलवे में खान-पान का ठेकेदार हो गया था।

उनके विज्ञान के शिक्षक शिव सुब्रमण्य अय्यर कहा करते थे, "कलाम, मैं तुम्हें ऐसा बनाना चाहता हूँ कि तुम देश-विदेश में उच्च शिक्षित व्यक्ति के रूप में पहचाने जाओ" (पृ 20, यादों के झरोके से - ए.पी.जे. अब्दुल कलाम)। जब वे पाँचवीं कक्षा उत्तीर्ण कर ली थी, तब आगे की पढ़ाई के लिए रामेश्वरम से बाहर जाने की आवश्यकता हुई। वहाँ से वे रामनाथपुरम गये। रामनाथपुरम में अयादुरै सोलेमन गुरु जी उनके आदर्श बने। उन्होंने कलाम को सिखाया कि वह जो कुछ भी चाहता है, निश्चित रूप से उसे पा सकेगा। बचपन से ही कलाम को आकाश अपनी ओर आकर्षित करता था। वह कुछ साल बाद आकाश में उडान भरने वाला रामेश्वरम का पहला बालक निकला। यह अयादुरै सोलेमन गुरु जी की प्रेरणा से हुआ था। कलाम के अनुसार सोलेमन सभी छात्रों को उनके भीतर छिपी शक्ति और योग्यता का आभास करवाने वाला महान शिक्षक थे। रामनाथपुरम में पढ़ाई के अच्छे अवसर थे, फिर भी कलाम को कभी कभी घर की याद बहुत आती थी। फिर भी अपने पिता जी के सपना साकार करने, अपने लक्ष्य को पाने के लिए कलाम ने कठोर परिश्रम किया।

कलाम ने 1950 में मद्रास इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलजी से अंतरिक्ष विज्ञान में स्नातक की उपाधि प्राप्त की है। स्नातक होने के बाद उन्होंने हावरक्राफ्ट परियोजना पर काम करने के लिए भारतीय रक्षा अनुसंधान एवं विकास

संस्थान में प्रवेश किया। 1962 में वे भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन में आये, जहाँ उन्होंने सफलतापूर्व कई उपग्रह प्रक्षेपण परियोजनाओं में अपनी भूमिका निभाई। इन्होंने 1974 में भारत द्वारा पहले मूल परमाणु परीक्षण और 1998 में भारत के पोखरान द्वितीय परमाणु परीक्षण में एक निर्णायक, संगठनात्मक, तकनीकी भूमिका निभाई। सन् 2002 में आप भारत के राष्ट्रपति चुने गए। पाँचे वर्ष की अवधि की सेवा के बाद वह शिक्षा, लेखन और सार्वजनिक सेवा के अपने नागरिक जीवन में लौट आए।

अब्दुल कलाम व्यक्तिगत ज़िन्दगी में बहुत अनुशासनप्रिय थे। वे शाकाहारी थे। इन्होंने अपनी आत्मकथा 'विंग्स ऑफ फायर'[1] भारतीय युवाओं को मार्गदर्शन करने के अंदाज में लिखी है। इनकी दूसरी पुस्तक 'गाइडिंग सोल्स-डायलॉग्स ऑफ द पर्पज ऑफ लाइफ'[2] आत्मिक विचारों को उद्घाटित करती है।

अब्दुल कलाम राजनीतिक क्षेत्र के व्यक्ति नहीं थे लेकिन राष्ट्रवादी सोच और राष्ट्रपति बनने के बाद भारत की कल्याण सम्बन्धी नीतियों के कारण इन्हें कुछ हद तक राजनीतिक दृष्टि से सम्पन्न माना जा सकता है। इन्होंने अपनी पुस्तक इण्डिया 2020[3] में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट किया है। वे परमाणु हथियारों के क्षेत्र में भारत को सुपर पॉवर बनाने की बात सोचते रहे थे। वह विज्ञान के अन्य क्षेत्रों में भी तकनीकी विकास चाहते थे। राष्टपति-दायित्व से मुक्त होने के बाद कलाम भारतीय प्रबंधन संस्थान शिलोंग,भारतीय प्रबंधन संस्थान अहमदाबाद, भारतीय प्रबंधन संस्थान इंदौर व भारतीय विज्ञान संस्थान, बैंगलोर के मानद फैलो व एक विज़िटिंग प्रोफेसर बन गए। भारतीय अन्तरिक्ष विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संस्थान, तिरुवनन्तपुरम के कुलाधिपति, अन्ना विश्वविद्यालय में एयरोस्पेस इंजीनियरिंग के प्रोफेसर और भारत भर में कई अन्य शैक्षणिक और अनुसंधान संस्थानों में सहायक बन गए। बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय और अन्ना विश्वविद्यालय में सूचना प्रौद्योगिकी और अन्तरराष्ट्रीय सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान हैदराबाद में सूचना प्रौद्योगिकी के विभाग में उन्होंने पढ़ाया।

कलाम ने साहित्यिक रूप से भी अपने विचारों को चार पुस्तकों में समाहित किया है, जो इस प्रकार है इण्डिया 2020, ए विज़न फॉर द न्यू मिलेनियम, 'माई जर्नी तथा इग्राटिड माइंड्स - अनलीशिंग द पॉवर विदिन इंडिया, इन पुस्तकों का कई भारतीय तथा विदेशी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है।

'मेरा भारत' नामक पुस्तक[4] में कलाम के अनेक भाषणों को संग्रहीत किया गया है। अपने बहुविध भाषण और सपनों के ज़रिए वे भारत को आज भी प्रेरित कर रहे हैं। इनमें वे हमारी कल्पनाओं को उड़ान भरने की शक्ति दे रहे हैं। इस में 'ज़िन्दगी खूबसूरत है' नामक अध्याय है जिसमें 'मेक योर मदर स्माइल मिशन', 'पुस्तकें हमारी साथी हैं' नामक लेख शामिल हैं, इसमें कलाम जी ने अपने निजी अनुभव व्यक्त करने की कोशिश की हैं। 'मेक योर मदर स्माइल मिशन' में कलाम ने बच्चों को ऐसे अनोखे काम दिए गए, जिससे वे हर दिन अपनी माँ के चेहरे पर मुसकान ला सके। इसमें उन्होंने लाखों बच्चों को यह शपथ दिलाई है - अपनी माँ को सदा मुस्कराहट दो, अगर तुम्हारी माँ मुस्कराएगी, पूरा घर मुस्कराएगा।/अगर घर मुस्कराया तो समाज मुस्कराएगा अगर समाज मुस्कराएगा तो मुस्कराएगा।/ इन अभियानों के दौरान कलाम के दिल को छू लेनेवाले अनुभव भी है, उसमें एक है दिल्ली से दसवीं कक्षा के छात्र धीरज का यह गणितीय समीकरण - / "माँ का प्यार - $\tan\theta$, जहाँ θ - 90 डिग्री, उसके समीकारण के अनुसार उसकी माँ का प्यार - अनंत। कलाम को यह माँ के प्रेम को अभिव्यक्त करने का शानदार तरीका लगा।

20 वें नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेले का सम्बोधन करके कलाम ने 3 मार्च 2012 में पुस्तकों के महत्व के बारे में बताया था।

'पुस्तके हमारी साथी हैं, लेख में इसे शामिल किया गया है। कलाम के अनुसार किसी अच्छी पुस्तक के सम्पर्क में आना और उसे खरीदना जीवन को सदा के लिए समृद्ध बनाने का एक तरीका है। वह पुस्तक सदा

के लिए, हमारी साथी बन जाती है। कभी-कभी पुस्तकें हमारे जन्म से पहले की होती हैं। वे जीवन के सफर में हमारा मार्गदर्शन करती है और कई पीढ़ियों तक ऐसा करती हैं।

कलाम ने सन् 1953 में चेन्नई के मूर मार्केट स्थित एक पुराने बुकस्टोर से 'लाइट फ्रॉम मेनी लैंप्स' नाम की एक पुस्तक खरीदी थी, पाँच दशकों से भी अधिक समय तक यह पुस्तक कलाम की दोस्त और साथी रही थी। इस पुस्तक के महत्व के बारे में तब पता चला जब कलाम के एक मित्र ने उसे उसी पुस्तक का नया संस्करण दिया। कलाम के मत में पुस्तक ही सबसे अच्छी चीज़ है, जिसे उसे दे सकते थे क्योंकि कलाम को पुस्तकों से बहुत प्यार था। कलाम के मत में वर्षों के बाद भी पुस्तक एक नया अवतार ले सकती है। अतः पुस्तकें शाश्वत और प्रभावशाली होती है। इस प्रकार कलाम ने अपने अनुभव के आधार पर जो कुछ कहने की कोशिश की है वे हमें भी सत्य लगता है। ऐसे अनेक बातों को इस पुस्तक के माध्यम से कलाम जी ने हमारे सामने रखा है।

किताबों को चाहनेवाला कलाम अध्ययन और अध्यापन को अधिक महत्व देते थे। इसप्रकार उनकी मृत्यु भी व्याख्यान करते वक्त ही हुआ था, जब 27 जुलाई 2015 की शाम अब्दुल कलाम भारतीय प्रबंधन संस्थान शिलोंग में एक व्याख्यान दे रहे थे, तब उन्हें दिल का दौरा हुआ और बेहोश होकर गिर पडे। उन्हें बेथानी अस्पताल में आई सी यू में ले जाया गया और दो घंट के बाद उनकी मृत्यु की पुष्टि कर दी गई। कलाम जी अपने जीवन काल में ही कई प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित हुए थे।

कलाम के 79 वें जन्मदिन को संयुक्त राष्ट्र द्वारा विश्व विद्यार्थी दिवस के रूप में मनाया गया था। उन्हें लगभग चालीस विश्वविद्यालयों द्वारा मानद डॉक्टरेट की उपाधियाँ प्रदान की गयी थीं। भारत सरकार द्वारा उन्हें 1981 में पद्मभूषण और 1990 में पद्म विभूषण का सम्मान प्रदान किया गया जो उनके द्वारा इससे और डी.आर.डी.ओ. में कार्यों के दौरान वैज्ञानिक उपलाब्धियों के लिए तथा भारत सरकार के वैज्ञानिक सलाहकार के रूप में स्थान प्रदान किया गया था।

1997 में उनको भारत का सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारत रत्न' प्रदान किया गया जो उनके वैज्ञानिक अनुसंधानों और भारत में तकनीकी के विकास में अभूतपूर्व योगदान के लए दिया गया था। 2005 में स्विटज़रलैंड सरकार ने कलाम के स्विटज़रलैंड आगमन के उपलक्ष्य में 26 मई को विज्ञान दिवस घोषित किया, नेशनल स्पेस सोशायटी ने वर्ष 2013 में उन्हें अन्तरिक्ष विज्ञान सम्बन्धित परियोजनाओं के कुशल संचलन और प्रबन्धन केलिए वॉन ब्राउन अवार्ड से पुरस्कृत किया।

आज हमारे साथ कलाम जी नहीं है, फिर भी भारत के लिए उन्होंने अपने कर्मों के माध्यम से जो योगदान प्रदान किए हैं, वे हमारे हृदय में सदा स्मरणीय रहेंगे।

सन्दर्भ सूची

1. डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम की आत्मकथा, ओरियंट लांग्मैन, 1999.
2. डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम और अरुण के. तिवारी, ओशियन बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, 2005.
3. डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम और वाई.एस. राजन, पेंगुन बुक्स लिमिटेड, 2014.
4. डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, प्रभात प्रकाशन, 2023.

सहायक ग्रन्थ सूची

1. मेरा भारत, डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, प्रभात प्रकाशन, 2023.
2. तेजस्वी मन, डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, प्रभात प्रकाशन, 2024.
3. टर्निंग प्वॉइंट्स, डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, राजपाल एण्ड सन्न, 2012.
4. भारत 2020 और उसके बाद, डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, डॉ. वाई.एस. राजन, प्रभात प्रकाशन, 2023.
5. द गाइडिंग लाइट, डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, प्रभात प्रकाशन, 2023.

वेबसाइट :

ए.पी.जे. अब्दुल कलाम - विकिपिडिया

सहायक आचार्या
एम जी कॉलेज, तिरुवनंतपुरम

(विश्व हिंदी दिवस पर विशेष)

फिजी गणराज्य में आयोजित 12 वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन

डॉ दुर्गारत्ना सी

विश्व स्तर पर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए भारत सरकार के विदेश मंत्रालय द्वारा 'विश्व हिन्दी सम्मेलन' का आयोजन किया जाता है। यह सम्मेलन हिन्दी भाषा केन्द्रित अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन का सबसे बड़ा एवं महत्वपूर्ण कार्यक्रम है। यह दुनिया भर के विद्वानों, भाषाविदों, शिक्षाविदों, लेखकों, पाठकों, प्रकाशकों, शिक्षकों, छात्रों, हिन्दी सेवा कर्मियों, हिन्दी प्रवर्तकों, हिन्दी भाषा प्रेमियों आदि को एक मंच पर लाने का सुनहरा अवसर है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत की राजभाषा हिंदी के प्रति लोगों में प्रेम, रुचि और जागरूकता विकसित करना, हिन्दी की विकास यात्रा को पहचानने के लिए लेखकों और पाठकों के दृष्टिकोण से हिन्दी साहित्य की गुणवत्ता को प्रोत्साहित करना। समय आने पर और भारतीय पर्यटकों का हिन्दी के साथ भावनात्मक रिश्ता मजबूत हो, इस इरादे से 1975 में विश्व हिन्दी सम्मेलन की शुरु आत की गई। विश्व हिन्दी सम्मेलन की परिकल्पना 1973 में महाराष्ट्र के वर्धा में 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति' द्वारा की गई थी। परिणामस्वरूप प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन 1975 में 10 से 12 जनवरी तक महाराष्ट्र के नागपुर में आयोजित किया गया। गौरतलब है कि अंतरराष्ट्रीय स्तर के इस अनूठे कार्यक्रम की शुरुआत तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने की थी और इस सम्मेलन में संत विनोबा भावे ने अपना संदेश दिया था। अब तक कुल 12 विश्व हिन्दी सम्मेलन हुए हैं।

2018 में मॉरीशस में आयोजित 11वें विश्व हिन्दी सम्मेलन के दौरान, अगले सम्मेलन की मेजबानी फिजी गणराज्य के द्वीप राष्ट्र में करने का निर्णय लिया गया। यह इसलिए है कि राष्ट्र फिजी में सबसे बड़ी संख्या में भारतीय हैं, जिनमें से अधिकांश हिन्दी बोलते हैं, और हिन्दी वहाँ की तीन आधिकारिक भाषाओं में से एक है। इसलिए इस बार 12 वाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन 15 से 17 फरवरी तक फिजी में आयोजित किया गया। यह विश्व स्तरीय भाषा विनिमय कार्यक्रम फिजी के नांदी (Nadi) में डेनाराउ द्वीप कन्वेंशन सेंटर में आयोजित किया गया था। इसमें दुनिया भर के 36 देशों के 25000 से ज्यादा लोगों ने हिस्सा लिया। इसका आयोजन भारत सरकार के विदेश मंत्रालय और फिजी सरकार के संयुक्त तत्त्वावधान में किया गया था। इस सम्मेलन का विषय है 'हिन्दीः पारंपरिक ज्ञान से कृत्रिम मेधा तक'। इसमें भारत के विदेश मंत्री डॉ. एस जयशंकर, विदेश राज्य मंत्री श्री वी मुरलीधरन, गृह राज्य मंत्री श्री अजयकुमार मिश्र शामिल थे । हमारे साथ गृह राज्य मंत्री और अन्य लोग मौजूद थे और सचिवों ने भाग लिया। इसमें भाग लेने के लिए भारत सरकार द्वारा लगभग 300 लोगों का चयन किया गया था और मैं उनमें से एक हूँ और मैं भाग्यशाली हूँ कि मुझे इस विश्व स्तरीय कार्यक्रम में भाग लेने का अवसर मिला।

12वाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन का लोगो (Logo) भारत और फिजी के सिद्धांतों के संयोजन और सामंजस्य को उजागर करता है। इसके केंद्र में है कमल जो भारत का राष्ट्रीय फूल है और प्राचीन भारतीय संस्कृति के अनुसार पवित्रता का प्रतीक है। इस लोगो में नीली लहरें और नारियल के पेड़ फिजी के खूबसूरत द्वीपों का प्रतिनिधित्व करते हैं। साथ ही इस लोगो में भारत और फिजी के झंडे के रंग भी मिले हुए हैं।

नयन मनोहर द्वीप - फिजी : फिजी ऑस्ट्रेलिया के निकट दक्षिण प्रशांत क्षेत्र में स्थित एक द्वीप है। यहाँ लगभग 300 द्वीप हैं जिनमें से कुछ ही द्वीपों पर लोग रहते हैं। यह एक सुंदर, सुरम्य द्वीप है जो चारों तरफ से समुद्र के

नीले पानी से घिरा हुआ है। यहाँ बेहद खूबसूरत प्रकृति के साथ खूबसूरत समुद्रतट हैं। इसकी राजधानी का नाम 'सुवा' है। जहाँ

सबसे ज्यादा (लगभग 60%) हिंदू हैं, वहाँ के प्रधानमंत्री का नाम सेताविनी राबुका है। वहाँ के उपप्रधामंत्री है- बिमन प्रसाद जो मूल भारतीय हैं । अंग्रेज जो हमारे देश में आये थे, उन्होंने फिजी द्वीप को अपना उपनिवेश बनाया और वहाँ गन्ने की खेती के लिए आवश्यक मजदूरों को 1870 से 1916 तक भारत से ठेके/समझौते पर ले जाते थे!! अंग्रेजों द्वारा ले जाए गए भारतीयों की तीसरी या चौथी पीढ़ी आजकल वहाँ सबसे बड़ी संख्या में रहती है। अंग्रेजों के दबाव के कारण, जो भारतीय भारत से (विशेषकर गुजरात और बिहार से) फिजी गए, वे अपने साथ रामायण, भगवद गीता, रामचरितमानस, हनुमान चालीसा जैसे पवित्र ग्रंथ लेकर चल रहे थे। नये देश-प्रदेश में पहुँचकर भी वे अपनी भारतीय संस्कृति-विरासत को नहीं भूले, बल्कि वहाँ अपने संस्कृति-संस्कारों को जारी रखा। जिसके कारण आज भी जब हम उस द्वीप के अंदर जाते हैं तो हमें ऐसा लगता है जैसे हम भारत के किसी राज्य के अंदर जा रहे हैं। उन द्वीपों की पहाड़ियों में ज्वालामुखी हैं, उनमें से कुछ जीवित हैं और कभी-कभी लावा उगलते हैं। बार-बार भूकंप आने के कारण वहाँ की ज्यादातर इमारतें छोटे-छोटे मकान हैं और ज्यादातर एक मंजिला हैं। खासियत यह है कि यहाँ गगनचुंबी इमारतें नहीं हैं। वहाँ तीन विश्वविद्यालय हैं और वहाँ के स्कूलों और कॉलेजों में हिंदी पढ़ाई जाती है। फिजी आने-जाने के लिए हमें वीजा (Visa) की जरूरत नहीं पड़ती। वहाँ के एकमात्र अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे का नाम 'नाडी' है जिसे हिंदी में 'नांदी' कहा जाता है। वहाँ के लोगों का रोजगार पर्यटन है लोग मिलनसार हैं जैसे ही वे हमें देखते हैं, मुस्कराते हुए 'भुला' कहकर हमारा स्वागत करते हैं। 'भुला' एक शब्द है जिसका इस्तेमाल किसी को संबोधित करने के लिए किया जाता है। 'भुला' शब्द का अर्थ है 'नमस्ते/ गुड मॉर्निंग' । वहाँ के मूल निवासी अफ्रिका के नीग्रो लोगों की तरह दिखते है, पुरुष और महिलाएँ लंबे, मोटे,काले और गुंगराले बाल के हैं। ये अपने बाल-जूडा या कान पर गुलाब, चंपा इत्यादी फूल रखते हैं।

फ़िजी - 12वाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन - यात्रा कथन : मेरा सौभाग्य है कि मुझे 15 से 17 फरवरी /2023 तक फिजी में आयोजित 12वें विश्व हिंदी सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व करने का सुनहरा अवसर मिला। केंद्र सरकार के विदेश मंत्रालय द्वारा सीधे चयनित होने के कारण मुझे सेमिनार में भाग लेने और संगोष्ठी में विचार प्रस्तुत करने का अवसर दिया गया। 6 फरवरी को दिल्ली के विदेश मंत्रालय से आशीष तिवारी जी ने मुझे फोन किया और पूछा, "क्या आपके पास पासपोर्ट है?" मैंने 'हाँ' कहा। अभी पिछले सप्ताह ही मेरा पासपोर्ट नवीकृत होकर प्राप्त हुआ था। जब मैं उससे पूछना चाहा कि मामला क्या है,उसने फोन कट कर दिया।"6 फरवरी को दिल्ली से डॉ. च मु. जब कृष्ण शास्त्री जी ने फोन किया और मुझसे अपने पासपोर्ट के पहले और आखिरी पेज की स्कैन की हुई कॉपी दोबारा भेजने को कहा, तो मैं हैरान और चिंतित हो गयी।

' क्यों सर? मेरा पासपोर्ट क्यों भेज हूँ? क्या बात है? 'पूछने पर उन्होंने कहा, "आपका नाम 15 से 17 फरवरी तक फिजी में होने वाले 12वें विश्व हिंदी सम्मेलन में भाग लेने वालों की सूची में है, अब वह फाइल प्रधानमंत्री कार्यालय तक पहुँच गई है। अगर आपका चयन होता है तो आपको सूचना दी जाएगी। मैं ठिठक गयी क्योंकि 9 तारीख तक दिल्ली से कोई सूचना नहीं आई थी। 10 फरवरी की शाम को आशीष तिवारी ने दिल्ली से फोन किया और कहा, "मैडम, फिजी में होने वाले हिंदी सम्मेलन के लिए आपका चयन हो गया है। आपको वहाँ सेमिनार में विचार मंडन का मौका मिला है।

जब मैंने अपना ई-मेल चेक किया तो मैं रोमांचित हो गयी और मुझे 13 तारीख को सुबह 10.30 बजे दिल्ली के इंदिरा गांधी हवाई अड्डे पर रिपोर्ट करने के लिए कहा गया

था। मैं यह जानकर चिंतित था कि मुझे केवल दो दिनों में तैयार होना था। मैं जाने की तैयारी करने लगी क्योंकि मेरे पास सोचने के लिए ज्यादा समय नहीं था।

अगले दिन 11 तारीख को मैं कॉलेज गयी और प्रिंसिपल और गवर्निंग बॉडी को मामला बताया और उनसे अनुमति ली। यदि हम स्वयं विदेश यात्रा करते हैं, तो हमें लगभग छह महीने पहले से तैयारी करनी होगी। लेकिन इस संदर्भ में मैं सिर्फ दो दिनों में विदेश यात्रा करता हूँ ! विदेश रहनेवाले मेरे बेटे और बेटी ने मेरी विदेश यात्रा के सभी विवरण इंटरनेट पर खोजे। मेरे पति ने मुझे बरती जाने वाली सावधानियों और चीज़ों के बारे में बताया क्योंकि वह पहले भी कई बार विदेश यात्रा कर चुके थे। मैंने बहुत ही कम समय में अकेले विदेश यात्रा की तैयारी कर ली। चूँकि यह पहली बार थी जब मैं अकेले विदेश यात्रा पर गयी थी, इसलिए अंदर थोड़ा डर और चिंता थी। लेकिन जर्मनी से बेटी, मोहाली से बेटे ने मुझे आश्वस्त किया कि 'आप कहीं भी हों, कोई भी समस्या हो, हमें कॉल करें, हम जहां हैं वहीं से आपका मार्गदर्शन करेंगे।'

तो 12वें तारीक सोमवार को शाम 6:30 बजे फ्लाइट मैंगलोर एयरपोर्ट से रवाना हुई और रात 9:30 बजे दिल्ली पहुँची। वहाँ पहुँचे मेरे बेटे राकेश ने मुझसे मुलाकात की और हम उस रात पेजावर श्री कृष्ण मठ, उडुपी, वसंत कुंज, दिल्ली में रुके। 13 तारीख पर सुबह हमने भगवान श्रीकृष्ण को प्रणाम किया और निकल पड़े। सुबह साढ़े दस बजे दिल्ली के इंदिरा गांधी अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे पर बेटे ने मुझे शुभयात्रा की शुभकामनाएँ दीं। वहाँ से आगे बढ़ते हुए, मैं उस काउंटर पर गयी जिसका उल्लेख पहले किया गया था और वहाँ पर रिपोर्ट की । वहाँ मैं ऐसे कई लोगों से जुड़ गया जो मेरी तरह फिजी जाने के लिए तैयार थे। अंदर गए और चेक-इन पूरा किया, आराम से बोर्डिंग की, उनके द्वारा उपलब्ध कराया गया स्वादिष्ट नाश्ता और पेय लिया। हम बड़े उत्साह से एक-दूसरे से बातचीत करने लगे। हमारी हालत यात्रा पर जा रहे स्कूली बच्चों जैसी थी !

हम दोपहर 2:30 बजे हमारे लिए बुक की गई एयर एशिया की विशाल चार्टर्ड फ्लाइट में सवार हुए। हमारे साथ विदेश राज्य मंत्री श्री मुरलीधरन, राज्य के गृह मंत्री श्री अजय कुमार, केंद्र सरकार के सभी मंत्रालयों के राजभाषा विभाग के विभिन्न सचिव, हिंदी अधिकारी आदि लोग भी थे तथा कुछ बच्चे भी थे जिन्हें वहाँ सांस्कृतिक कार्यक्रम देने के लिए चुना गया था। हमारे टीम में करीब 350 लोग थे। वहाँ हिन्दी लेखक, शिक्षक, कवि, प्रकाशक, पाठक, हिन्दी प्रचारक, हिन्दी प्रेमी आदि थे। धीरे-धीरे हमारा विमान उड़ान भरने लगा। हमारी लंबी यात्रा तब शुरू हुई जब सभी लोग एक-दूसरे को जानने लगे। हमने बातें कीं, गाने गाए, हँसे और मज़ाक किया जैसे हम किसी शादी समारोह में जा रहे हों। हम समय- समय पर गगनसखियों द्वारा परोसे गए पेय और जलपान के साथ आगे बढ़े। उस रात 10:30 बजे हम मलेशिया की राजधानी कौलालंपुर पहुँचे। हमने वहाँ करीब दो घंटे बिताए और फिर से विमान में चढ़ गए। वहाँ से हमें लेकर विमान फिजी की ओर चलता रहा।

फिजी का समय भारत के समय (IST) से लगभग 6:30 घंटे आगे है। 14 तारीख को शाम 4:00 बजे हम फिजी के एकमात्र अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे 'नांदी' पर उतरे। जब हम उतरे तो उधर भारी बारिश हो रही थी। उतरते ही हमें 'वीज़ा' दे दिया गया। वहाँ के लोगों ने गीत और नृत्य आदि सांस्कृतिक कार्यक्रमों के साथ हमारा बहुत प्रेमपूर्वक स्वागत किया और हमें 'देनरावु' नामक द्वीप पर स्थित होटल शेरेटन इंटरनेशनल में ले गए जहाँ सम्मेलन होना था। मैंने सोचा था कि यह होटल एक बहुमंजिला गगनचुंबी इमारत होगी। लेकिन वहाँ देखें तो यह एक मंजिला होटल है। लेकिन इसे सुंदर, शानदार लैंप और फूल के बर्तनों से बहुत खूबसूरती से सजाया गया था। आसपास के कमरे लम्बे फैले हुए थे। इसे देखकर मुझे गोवा के होटलों की याद आ गई। मानो फिजी में कभी-कभार आने वाले भूकंप के कारण भारी, बहुमंजिला इमारतें नहीं बनाता !

मैला-कुचैला चड्डी/बारबुंडा चड्डी, शर्ट, कान/सिर पर फूल पहने हुए निग्रो जैसे दिखने वाले मूल निवासी हमें प्यार से 'भुला' कहकर संबोधित किया और रात 8 बजे स्वादिष्ट रात्रिभोज करके आराम करने लगे।

अगले दिन 15 तारीख को विश्व हिंदी सम्मेलन का उद्घाटन कार्यक्रम सुबह 9:30 बजे शुरू हुआ। हमारे विदेश मंत्री डॉ. एस. जयशंकर जी और राज्य मंत्री मुरलीधरन जी को फिजी के राष्ट्रपति जी मंच पर ले आये। सर्वप्रथम विद्वानों द्वारा वेद घोष एवं स्वस्ति वाचन किया गया। इसके बाद शरीर को लताएँ,पत्ते, पंख आदि बांधने वाले आदिवासी मंच पर आये और पूजा-अर्चना की। डॉ. एस. जयशंकर ने कार्यक्रम का उद्घाटन कर भाषण दिया। फिजी के राष्ट्रपति रबूका ने शुभकामनाएँ दीं। उद्घाटन कार्यक्रम के बाद सेमिनार हुआ। दोपहर और रात के खाने के लिए एक विशाल रात्रिभोज की व्यवस्था की गई थी। इस सम्मेलन में विभिन्न स्टॉल और काउंटर थे, जिसमें हजारों लोगों ने भाग लिया था। सभी प्रकार के भारतीय भोजन-नाश्ता, पेय, फल उपलब्ध थे और शाम को 7 बजे हमारे भारतीय छात्रों द्वारा एक बहुत ही सुंदर नृत्य और सांस्कृतिक कार्यक्रम हुआ। उस रात फिजीवासियों की ओर से मिष्ठान रात्रि भोज का आयोजन किया गया था। सोलह तारीख को सुबह से समानांतर सत्र आयोजित किये गये। जिसमें मैंने एक पेपर प्रस्तुत किया। रात भोज के बाद संगीत कार्यक्रम आयोजित था।इस संगीत कार्यक्रम का आयोजन भारत के विदेश मंत्रालय के राजभाषा विभाग द्वारा किया गया था। इसकी थीम थी 'देश विदेश में हिंदी शिक्षण चुनौतियाँ और समाधान'. इस मामले में मैं कर्नाटक में हिंदी के अध्ययन की चुनौतियों और संभावनाओं को प्रस्तुत किया। शाम 4:00 बजे सभी संगीत कार्यक्रम खत्म होने के बाद आये हुए सभी मेहमानों को बस से अलग-अलग प्रसिद्ध दर्शनीय जगहों पर ले जाया गया। हम जंगल क्षेत्र में स्थित उनके गांव में गए। चूँकि वहाँ पहुँचते समय भारी बारिश हो रही थी, हम जंगल के अंदर जाकर उनके कलबर गाँव को पूरा नहीं देख सके। वहाँ एक बांस की झोंपड़ी के अंदर आदिवासी महिलाओं और पुरुषों ने हमें अपने विभिन्न नृत्य, वाद्य और संगीत दीखाए। 'भुला' कहते हुए उन्होंने आदर प्रकट किया। वहाँ से वापस आते समय वहाँ एकमात्र मंदिर 'शिव सुब्रह्मण्य' मंदिर था। हमें आंतरिक नाभि दर्शन प्राप्त हुआ। उस रात डॉ. एस जयशंकर द्वारा रात्रि भोज की व्यवस्था की गई। उस दिन फिजी सरकार द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया था जिसे देखते हुए भोजन का आनंद लिया।

तीसरे दिन सुबह 9:30 बजे अंतिम दिन का समापन कार्यक्रम हुआ। हमारे आदरणीय विदेश मंत्री डॉ. एस. जयशंकर जी ने समापन भाषण दिया। फिजी के उपमुख्यमंत्री बिमन प्रसाद जी ने शुद्ध हिंदी में बात की। इन दो दिनों में मैंने वहाँ मौजूद कुछ लोगों से बात की। जब वे हमें देखते हैं तो आगे आकर बोलते हैं! एक परिवार के पति-पत्नी सदाशिव और मीनाक्षी जो वहाँ के सेवानिवृत्त स्कूल शिक्षक हैं। एक अन्य परिवार के राघव और उनकी पत्नी यमुना ने कहा, हम अपने दादा के समय में आए थे। भारत के हमारे मूल स्थान गुजरात को देखने की इच्छा है, जो अभी तक पूरी नहीं हुई है। 'भारत के साथ अब हमारा नया रिश्ता मजबूत हो गया है, क्योंकि हमारे बेटे की शादी गुजरात की एक लड़की से हुई है।' उन्होंने खुशी साझा की। इसी तरह, थॉमस नाम के एक बूढ़े व्यक्तिसे हमारी मुलाकात हुई। ब्रिटिश जिन परिवारों को भारत से फिजी ले गए थे, उनमें ईसाई परिवार भी शामिल थे। वे अपने दादा के समय फिजी गए थे। अब वह वहाँ खेती कर रहे हैं और पर्यटकों के लिए 'गाइड' के रूप में काम कर रहे हैं। उन्होंने हमारे प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदीजी को देखने और उनसे बात करने की इच्छा व्यक्त की। दोपहर में हमने एक शानदार भोजन का आनंद लिया और भारत लौटने के लिए तैयार हो गए। होटल के कर्मचारी जो पिछले दो दिनों से हमारे प्रिय थे, उन्होंने हमें विभिन्न स्मृति चिह्न दिए और एक स्वर में 'भुला' कहकर हमें विदा किया।

वहाँ से दोपहर 3:00 बजे हम 'नांदी' हवाई अड्डा में पहुंचे। वहाँ से हम शाम के 4:30 बजे की फ्लाइट में सवार हुए। रात भर बातें, हँसी, गाना-बजाना होता रहा। बीच रास्ते में मलेशिया की राजधानी कुआलालंपुर में फिर आधी रात को विमान से उतरना पड़ा। वहाँ करीब 2 घंटे बिताने के बाद विमान ने दोबारा उड़ान भरी और 18 तारीख की सुबह 8 बजे दिल्ली के इंदिरा गांधी अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे पर उतरा। वहाँ हमने सबको अलविदा कहा और पुरानी यादें ताजा करते हुए अपने-अपने शहर की ओर चल पड़े। उस शाम, मैं दिल्ली से मैंगलोर आ गयी और रात को पुत्तूर पहुँचे। मैं भारत सरकार के विदेश मंत्रालय को इस विदेश यात्रा पर जाने के लिए मुझे चुनने और अनुमति देने के लिए, मेरे कॉलेज की गवर्निंग बॉडी और प्राचार्य जी को उनकी अनुमति और प्रोत्साहन के लिए, संकाय सदस्यों, प्राध्यापक बंधुओं और मेरे परिवार के सभी सदस्यों को उनके सहयोग के लिए धन्यवाद देती हूँ। जो विदेश यात्रा भाग्य से आई थी, वह छह दिन पहले ही यहाँ से निकली और फिजी तक चली गई, इसे 'स्वप्न' कहा जाता है। मेरी विदेश यात्रा एक मधुर स्मृति है और आज भी 'भुला' शब्द मेरे कानों में गूंजता है, फ़िजी की स्मृति ताजी है।

अन्य सूचनाः

1. फिजी को 'फिजी द्वीप समूह गणराज्य' के रूप में जाना जाता है। यह दक्षिण प्रशांत महासागर में मलेशिया में एक द्वीप समूह है।
2. फिजी को 10 अक्टूबर 1970 को ब्रिटेन से आजादी मिली और इस दिन को देश का 'राष्ट्रीय दिवस' घोषित किया गया है।
3. यहाँ की मुद्रा का नाम है - फ़िजी डॉलर।
4. फिजी का सबसे उँचा पर्वत- माउंट टोमानीवी जिसकी ऊँचाई 1324 मीटर है।
5. फिजी का राष्ट्रीय पक्षी - कोल्लारेड लॉरी
6. फिजी का राष्ट्रीय फूल - टैगिमौसिया
7. सबसे बड़ा द्वीप ओशिनिया है।
8. मेके (माका) - पारंपरिक नृत्य। अपनी सुंदर समृद्ध संस्कृति-विरासत को व्यक्त करने के लिए पुरु षों और महिलाओं द्वारा मिलकर किया जाने वाला नृत्य। इसमें उन्हें जंगल की लताएँ, पत्तियाँ, तने और जड़ें पहनाई जाती हैं।
9. फिजी कल्चरल विलेज (क्क्त्र क्व्ष्थ्य्द्व्द्ध्त्न्ड्ढ ज्न्थ्थ्ठ्ठढ्ढ) - सबसे खूबसूरत आकर्षणों में से एक है फिजी कल्चरल विलेज जिसमें नंदी, नाओ और नाकाकारा के क्षेत्र शामिल हैं। यहां हम फ़िजी संस्कृति की जीवन्तता और समृद्ध प्रकृति को देखते हैं।
10. गार्डन ऑफ स्लीपिंग जाइंट यह सबसे सुखद अनुभव के लिए अवश्य देखने लायक जगह है।
11. डेनारू पोर्ट मरीनाः यह एक शॉपिंग सेंटर जगह है। यहाँ पर्यटकों को आकर्षित करने वाली दुकानों की सैकड़ों कतारें हैं। सीपियों और अन्य सुंदर वस्तुओं से बनी सजावटी और संग्रहणीय वस्तुएँ हैं। लेकिन कीमत थोड़ी महंगी लगती है।
12. शेरेटन फिजी गोल्फ एंड बीच रिज़ॉर्ट यहाँ लगातार सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित होते रहते हैं जो फिजी की कलात्मक संस्कृति को प्रदर्शित करते हैं। इसे पर्यटक आनंद से भी देख सकते हैं

परामर्शन ग्रंथ :

1. प्रयोजनमूलक के विविध रूप- कल्पना प्रभु, अलका प्रकाशन कानपुर
2. मानक हिन्दी व्याकरण -डॉ. एच आर मित्र, गंगा यमुना प्रकाशन इलहाबाद
3. फिजी में हिन्दी - डॉ. विवेकानन्द शर्मा का आलेख
4. विदेशों में हिन्दी शिक्षणः समस्याएँ और समाधान- ज्नान प्रकाशन, बेंगलूर
5. भारत में शिक्षण गुणवत्ताः चुनौतियाँ और समाधान- ज्नान प्रकाशन बेंगलूर
6. राष्ट्रभाषा हिन्दी और राजकीय पत्र व्यवहार- डॉ. घनश्याम अग्रवाल, जयभारती प्रकाशन इलहाबाद
7. प्रवासी हिन्दी साहित्य : संवेदना के विविध संदर्भ -(सं.) डॉ. प्रतिभा मुदलियार, अमन प्रकाशन कानपुर

सहायक प्राध्यापिका एवं हिंदी विभाग अध्यक्षा
विवेकानंद महाविद्यालय (स्वायत्त), पुत्तुरु द.क, कर्नाटक

आधुनिक परिवेश में परिवार

प्रो संजय एल मादार

आधुनिक हिंदी कहानी को मानव परिवेश के चित्रांकन का प्रभावपूर्ण माध्यम कह सकते है। आधुनिक कहानी परिवेश, व्यक्ति समाज, घटना वर्णन और व्यक्तिमन की विभिन्न पीड़ाओं से होती हुई निरंतर आगे बढ़ रही है। समाज की महत्वपूर्ण इकाई मनुष्य ही है, फ़िर चाहे स्त्री हो या पुरुष, सवर्ण हो या दलित। जिस समुह में वह रहता है, उसका परिवेश उसे गंभीरता से प्रभावित करता है। आधुनिक मनुष्य समाज के विभिन्न परिवेशों में पड़कर कहीं आजादी महसूस कर रहा है तो कहीं घुटन का अनुभव भी। समस्त साहित्य की धुरी जीवन ही है। अतः आधुनिक कहानी ने सामाजिकता का एक नया स्तर बना लिया है। वर्तमान कहानी भविष्य की संभावनाओं की खोज करने में गतिशील है। आज की कहानी कहीं भावुकता का विरोध करती है, तो कहीं उसे साथ लेकर भी चलती नज़र आती है।

वर्तमान कहानी में आधुनिक चेतना का वर्चस्व बना हुआ दिखाई देता है। इसमें आधुनिक जीवन का अंतर्विरोधों और भूमंडलीकरण से उत्पन्न विडंबनाओं को सहजता से व्यक्त किया है। इस दौर की कहानियों में आधुनिक चेतना का प्रभाव मार्मिक रूप से लेखकों ने प्रस्तुत किया है। सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि क्षेत्रों में जो बदलाव दिखाई दे रहा है यह बदलाव इसी आधुनिक चेतना का ही परिणाम है। इस कारण वर्तमान कहानियाँ पाठकों तथा समाज में नई चेतना का संचार करती दिखाई देती है। आधुनिक चेतना सोच के रूप में विकसित हुई है । कुछ एक अपवादों को छोड़कर आधुनिकता की बहुत सारी प्रवृत्तियों के लिए हम पश्चिम के ऋणी है । इस आधुनिकता को लेकर दिनकर जी कहते है - 'आधुनिकता एक प्रक्रिया है, यह प्रक्रिया अंधविश्वास से बाहर निकलने की है । नैतिकता में उदारता लाने की है, बुद्धिवादी बनने की प्रक्रिया है, धर्म के सही रूप तक पहुँचने की प्रक्रिया है।"[1] इसी तरह निर्मल वर्मा आधुनिकता को एक चेतना मानते है । जो रूढ़ीगत परंपराओं का खंडन करती है। वे कहते हैं "आधुनिकता में उन अंधविश्वासों स्ढ़ीगत फ़ैशनों और फ़ार्मुलों पर शंका प्रकट की गई है, जिन्हें हम आँख मूँदकर स्वीकार कर लेते है।"[2] तो केदारनाथ अग्रवाल का कहना है कि हर युग में परिस्थितियों के अनुसार आधुनिकता के विभिन्न संदर्भ दर्शित होते हैं। जो उस युग को प्रभावित करती है। इसलिए आधुनिकता जीवन के हर क्षेत्र में प्रदर्शित हो रही है। उनके अनुसार "आधुनिकता कालबद्ध चेतना है। जैसे समय से परे कुछ नहीं वैसे ही समय के परे आधुनिकता भी नहीं।"[3] आधुनिकता मात्र वैयक्तिक चेतना की परिधि में नहीं बल्कि व्यापक और विकासमान सामाजिक चेतना के परिप्रेक्ष्य में पहचानने की कोशिश है ।

भारतीय संस्कृति एवं समाज में परिवार एक ऐसी संस्था है जो अपने विश्वास,आत्मीयता और भावात्मकता की बुनियाद लिए होती है। परिवार समाज की प्राथमिक इकाई है, जो व्यक्ति के चरित्र निर्माण एवं समाज की सुदृढ़ता को बलशाली बनाये रखती है। आधुनिकता की चपेट में भारतीय परिवार में भी विघटन उत्पन्न हुआ है। लेकिन समय और परिस्थितियाँ जो भी हो भारतीय संस्कृति में परिवार का महत्व हमेशा से रहा है। परिवार के सदस्यों द्वारा आपसी स्नेह तथा एक दूसरे के सुख-दुख में भागीदारी का चित्रण हमें संयुक्त परिवार में ही मिलता है। यहाँ व्यक्ति को अपनत्व और ममत्व की कमी नहीं खलती है। साथ ही व्यक्तिके विकास में परिवार से बढ़कर कोई दूसरी इकाई नहीं है । इसलिए हम कह सकते है कि परिवार एक आधारभूत इकाई के रूप में तथा समाज के ढ़ाँचे और चरित्र को बनाने में महत्वपुर्ण स्थान रखता है। परिवार में सामूहिक चिंता परिवार के सदस्यों का आपसी प्रेम एवं जिम्मेदारी वहन का दायित्व तथा परिस्थिति को संभालने का चित्रण कहानीकार मधु काँकरिया ने अपनी कहानी 'दरसल मम्मी' में व्यक्त किया है। वर्तमान कहानियों का अध्ययन करने पर यह सामने आता है कि हिंदी के कहानीकार समाज में बढ़ते पारिवारिक विघटन और एकल परिवार के बढ़ते प्रचलन को समाप्त करना चाहते है। यह बात 'पत्नी का चेहरा' (मनोज कुमार पाण्डे) कहानी में व्यक्तहुआ है। वे कहते है "मेरे लिए घर एक स्वर्ग है।"[4] परिवार की छत्र-छाया में व्यक्तिबड़ी से बड़ी समस्या से भी उबर सकता है। आधुनिक कहानीकार परिवार के संकुचित होते जा रहें अर्थ को विस्तृत करना चाहते है। उन्होने संयुक्त परिवारो के महत्व की व्याख्या के साथ ही एकल परिवारो की बढ़ती

अवधारणा का विरोध और उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न होनेवाली समस्याओं को भी कहानियों में रेखांकित किया है। 'सार्थक जीवन' (विनोदनी) कहानी में परिवार के महत्व पर प्रकाश डाला है। कहानी का पात्र रामराव कहता है कि "मैंने सारी उम्र केवल काम कर अधिक से अधिक धनोपार्जन में ही बर्बाद कर दिये, देर रात तक मुवक्किलों के साथ उनके मामले मुकद्दमें सुनता रहता और दिन - भर कोर्ट कचहरी के चक्कर में बीत जाता.....कभी शांति से परिवार, पत्नी बच्चों के साथ बैठकर बातचीत तक नहीं की। मेरे साथ वे लोग घूमने फ़िरने को तरसते थे । परंतु मेरे पास समय ही कहाँ था । सभी बच्चे मुझसे दूर होते चले गये।"[5]

समय के बदलाव के साथ-साथ बहुत सी बातों में परिवर्तन आता है तो यह परिवार नामक संस्था पर लागु होना भी स्वाभाविक है। इसलिए परिवार का स्वरूप हमेशा एक जैसा नहीं रहा। आधुनिक चेतना ही परिवार को सुदृढ़ बनाने का कारण बनी थी। और वही आधुनिक चेतना परिवार टूटने का कारण भी बनी हुई है। यह बात किसी से छिपी नहीं कि आधुनिक चेतना के चलते संयुक्त परिवार एकल परिवार में बदल गये। परिवार रूपी वृक्ष की छाँव में व्यक्ति भीषण दुख से उबर जाता है। पारिवारिक स्थितियाँ अनुकूल न हो तो वह स्वयं को अकेला महसूस करता है। यही परिवार के विघटन का कारण भी बन गया है। इसका सबसे बडा कारण यह भी है कि लोगों की संयुक्त परिवार संबंधी बदलती धारणा । ग्रामीण परिवार की बात की जाय तो गाँव में बुजुर्ग संयुक्त परिवार की नींव माने जाते थे। परंतु आधुनिक चेतना ने इस सामुहिक उत्तरदायित्व को समाप्त कर दिया है। देहाती परिवेश में बुर्जुग का घर में होना बरगद की छाँव की तरह होता है । लेकिन आधुनिक एकल परिवार की धारणा के कारण बुजुर्ग ने परिवार में अपना महत्व खो दिया है। इस बात का चित्रण 'कंदिल' (राकेश कुमार) कहानी में देखने को मिलता है। वर्तमान समय में एकल परिवार की बढ़ती धारणा ने संयुक्त परिवार के महत्व को नजर अंदाज किया हुआ स्पष्ट दिखाई देता है। पारिवारिक विघटन समकालीन सामाजिक जीवन की एक विषम समस्या है। स्वीकृत नैतिक मानदंडो का झूठा पड जाना, स्वार्थ, आधुनिक चेतना का अतिशय प्रभाव पारिवारिक संबंधो में विश्वास की कमी लाता है। जिसके कारण समकालीन परिवार विघटन का शिकार हो रहा है। इस बात का चित्रण हमें 'चिड़िया जैसी माँ' (सूर्यबाला) कहानी में दिखाई देता है। इसी तरह 'दाखिला' (मधु कांकरिया) कहानी में भी यह स्पष्ट नजर आता है। आधुनिक चेतना के कारण मनुष्य की जीवन शैली में अधिकतर बदलाव आया है। इसका असर पारिवारिक संबंधों पर भी दिखाई पडता है। 'काला लिबास' (सुषम बेदी) इसका एक उदाहरण हो सकता है ।

समय तेजी से बदल रहा है। आधुनिक समय में नये जीवन मूल्यों का सृजन भी आवश्यक है। क्योंकि समय के साथ रूढ़ीगत मान्यताओं से मोहभंग समय की मांग भी है। इस विचार धारा के अनुसार 'सींगल' (राकेश कुमार सिंह) कहानी में परिवार के संबंध में बदलती विचारधारा का चित्रण मिलता है। वह लिखते है "शादी का मतलब होना एक अदद बीबी, बीबी के बाद बच्चे, दोनों का योग होता है। परिवार और इन सबका जमा मतलब होती है जिम्मेदारियाँ ....। याने जिंदगी में एक ठहराव और फ़िर आदमी की रोमांचप्रिय प्रकृति का स्वर्गवास ....।"[6] आधुनिकता की यह सबसे बडी विडंबना है कि आज हम जितने आधुनिक होते जा रहे है उतने ही हमारे जीवन मूल्य बदलते जा रहे है। बेशक आधुनिकता ने मनुष्य के जीवन में तमाम सुख सुविधाओं को ला खडा किया है। लेकिन इसे पाने की लालसा ने मनुष्य के जीवन मूल्यों की नैतिकता को खत्म कर दिया है। इन्हीं कारणों के चलते परिवार में अकेलेपन का बोध गहराने लगा है। जिसके कारण परिवार के सदस्य अपने परिवार से कटते जा रहा है। कुछ एक अपवादों को छोडकर कामकाजी वर्ग में यह अत्याधिक मात्रा में परिलक्षित होता दिखाई देता है।

वर्तमान समय में यह स्पष्ट दिखाई दे रहा है कि व्यक्ति अपने आधुनिक दिनचर्या में इस तरह व्यस्त हो गया है कि उसका सभी से संबंध टूटने की कगार पर है। इस आधुनिक चेतना के दबाव ने सबसे ज्यादा नुकसान मानवीय संवेदना को पहुँचाया है। जिसके कारण आज व्यक्ति अकेलेपन और कुंठा से ग्रस्त हो गया है। 'फुर्सत' (मो. आरिफ़) कहानी संबंधो में उत्पन्न होते तनाव को तलाशती है। आधुनिकता की दौड़ में वह परिवार से दूर हो गया है। परस्पर प्रेम भावना के साथ ही वह सीमित होते सरोकार तथा परिवेश से कटते जाने की स्थिति तथा रोजमर्रा के भागमभाग में वह अकेलेपन और कुंठा का शिकार होता जा रहा है। कहानीकार पात्र के माध्यम से एक जगह कहते है कि "कब श्रीमती जी ने होमवर्क पूरा कराते कराते स्कूल से कॉलेज पहुँचा दिया, पता ही नहीं चला । यहाँ तक कि एक-एक कर सारे दोस्त स्मृतियों में समा गये, सगे संबंधियों

के चेहरे बस याद रहे । दूर के रिश्तेदारों के नाम तक भूल गये।"[7] परिवार में बढ़ती दूरियाँ, संबंधो में आते बदलाव और सीमित होते दायरे के कारण अकेलेपन और कुंठा की समस्या बढ़ती ही जा रही है । पिंजरा (जयश्री राय) कहानी भी अकेलेपन का दंश झेलती एक स्त्री की कहानी है। वर्तमान समय में अलग-अलग सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि के होने के बावजूद इसका दुख एक है अकेलेपन और उपेक्षा की समस्या।

परिवार में आधुनिक चेतना का सबसे अधिक प्रभाव परिवार की नारियों पर दिखाई देता है। पहले कहानियों में यहाँ नारी दबी-सहमी पात्र के रूप में पाठकों के सम्मुख आती थी, वहीं आज के कहानीकारों ने नारी में नई चेतना, स्फूर्ति का संचार भर दिया है। 'क्षितिज' (सुधा ओम ढ़ींगरा) इसी का उदघाटन करती है। इस कहानी में परिवार और समय की कुंठित रूढ़िवादी मूल्यों को नकारकर अपने जीवन के नये अर्थ ढूँढ़ने को आरंभ किया है। आधुनिक चेतना के बढते प्रभाओं के चलते बच्चों से उनका बचपन छीन लिया है। महानगर के बच्चे जिंदगी की पेंचीदगियों का सामना कर रहें है। उनके अभिभावकों द्वारा उनके सामने प्रतियोगिताएँ और जीवन के प्रति अन्य ऐसे आकर्षण खडे किए है। जिसके चलते उसका बचपन कही दूर चला गया है। क्योंकि माता-पिता अपनी आकांक्षा के दबाव में अपने सारे सपने अपने बच्चों पर थोप दे रहे हैं । वास्तविकता यह है कि समाज के हर वर्ग में यही स्थिति मौजूद है। पति-पत्नी जीवन के साथ- साथ परिवार का महत्वपूर्ण अंग भी है। पति-पत्नी के संबंध की सुदृढ़ता एक मजबूत परिवार की नींव डालती है। आधुनिक चेतना के बढ़ते और बदलते पारिवारिक जीवन के साथ पति-पत्नी के संबंध पर भी प्रभाव पड़ा है। आधुनिक युग में कारपोरेट शक्तियों का प्रभुत्व बढ़ गया है। आज के बदलते सामाजिक मूल्यों का तेजी से विघटन होता जा रहा है। इसी का नतीजा यह हुआ कि पति ही नहीं पत्नी के स्वभाव में भी परिवर्तन आया है। दोनों के संबंधों में आये बदलाओं के कारण वैवाहिक संबंध में निराशा होने लगी है। डॉ. ज्ञानवती अरोड़ा कहती है "समाज के आधुनिकीकरण से भारतीय परंपराओं का ह्रास हो रहा है। भारतीय संस्कृति में जिन रिश्तों को पर्दे में रखा गया है वे भी पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव होने से खुले रूप में समाज के सामने आ रही है।"[8]

वर्तमान समय की कहानियों में कहीं -कही पिता-पुत्र के संबंध की मधुरता प्रकट होती है। (गांधी जयंती-संजय कुंदन) तो कही पिता पुत्र के बीच वैचारिक संघर्ष भी दिखाई देता है। (संभवामी युगे-युगे- राकेश कुमार) पिता जहाँ अपने पुत्र के अरमानों को पूरा कर उससे अपेक्षाएँ रखते हैं वहीं पुत्र पिता के विचारों को अपने विकास में बाधा मानते है। "मैं आपकी परछाई नहीं बनना चाहता दादा। मेरी अपनी अलग पर्सनैलिटी है, विचार है, जीवन मूल्य है। पुराने वैल्यूज के आपके ढकोसलों में जीना मुझसे नहीं हो सकेगा। मैं प्रैक्टिकल बनना चाहता हूँ। आज की प्रायरिटीज के योग्य बनना चाहता हूँ।"[9] (घोड़ा-राकेश कुमार सिंह)। माता-पिता बच्चों के जीवन में श्रृंखला की कडियों की तरह होते है। परंतु आधुनिक परिवेश में बच्चों ने उन्हे सीढ़ी बना लिया है। वर्तमान समय में माता-पिता के लिए बच्चों के पास समय और जगह दोनों नहीं है।

पारिवारिक जीवन समाज की सर्वोच्च इकाई है। समाज के निर्माण में पारिवारिक वातावरण महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हिंदी कहानीकारों ने अपनी कहानियों में पारिवारिक जीवन की समस्याओं में बदलते पारिवारिक स्थिति का वास्तविक चित्रण किया है। आधुनिकता और भौतिकवादी दौड़ में एकल परिवार, बदलते जीवन मूल्यों, बदलती विचारधारा और दांपत्य जीवन पर पड़ते प्रभाओं को अपनी कहानी का विषय बनाया है। परिवार में होने वाले परिवर्तन का असर समाज पर पडना स्वाभाविक है। इसलिए परिवार रूपी संस्था को सशक्त और संस्कारयुक्त बनाना वर्तमान समय में अति आवश्यक हो गया है।

संदर्भ :

1. डॉ.ज्ञानवती अरोड़ा-समकालीन हिंदी कहानी,यथार्थ के विविध आयाम.
2. निर्मल वर्मा - शब्द और प्राक्कथन : सापेक्ष (पत्रिका)
3. केदारनाथ अग्रवाल : समय समय पर (आधुनिकता समस्या और समाधान)
4. मनोज कुमार पाण्डेय - पत्नी का चेहरा
5. विनोदनी : कथा सागर- कहानी खंड
6. राकेश कुमार - जोड़ा हारिलकी रूपकथा
7. मो. आरिफ़ - फ़ुर्सत
8. डॉ. ज्ञानवती अरोडा - समसामयिक हिंदी कहानी में बदलते पारिवारिक संबंध
9. राकेश कुमार- हाँका तथा अन्य कहानियाँ

विभागाध्यक्ष, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान,
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा,
चिट्टूर रोड, एरणाकुलम-682016, केरल

सामसिक संस्कृति की रचना में सूफ़ियों की भूमिका : 'दिनकर साहित्य' की दृष्टि में

चिराग राजा

भारतीय संस्कृति की रचना एवं इसके निरन्तर विकास के कई आयाम हैं। कुछ विचारक इसे विश्व की सबसे प्राचीन संस्कृति घोषित करते हैं, तो वहीं कुछ इसे निरन्तर विकसनशील मानते हैं। भारतीय संस्कृति अनेकों उतार-चढ़ावों से गुज़रकर आज सर्वथा भिन्न रूप में हमारे समक्ष मौजूद है। समग्रतः भारतीय संस्कृति का मूल स्वभाव सामासिक है। इस स्वभाव की निर्मिति में समय-समय पर कई तत्त्व समाहित होते गए । इन तत्त्वों के समावेश के कारण ही इसे 'सामासिक संस्कृति' कहा जाने लगा।

भारतीय का सांस्कृतिक इतिहास कई सामाजिक क्रांतियों का साक्षी रहा है। विशेष रूप से यह क्रांतियाँ देश के इतिहास के मध्यकाल में घटित हुईं। भारत के इतिहास का मध्यकाल अर्थात इस्लाम के आगमन एवं सत्ताधीश होने का समय। छठीं-सातवीं सदी में जब इस्लाम धर्म का धरातल पर उदय हुआ तब विश्व की परिस्थितियाँ अत्यंत उलझी हुई थीं। एक ओर ईसाइयों द्वारा वैश्विक प्रसार की राह पर जाने की चेष्टाएँ की जा रही थीं, वहीं दूसरी ओर अफ्रीका एवं दक्षिण एशिया जैसे भूभाग अपनी स्थानीय अस्मिता और बाहरियों के आगमन जैसी स्थितियों के लिए प्रतीक्षारत थे। ऐसे समय में ही सांस्कृतिक आदान-प्रदान एवं संघर्ष शुरू होता है।

यह संघर्ष दो विपरीत दिखने वाली संस्कृतियों का परस्पर संघर्ष है, किन्तु वास्तव में संस्कृतियों के मिलन की तरह है । संस्कृतियों के इस आपसी मिलन की परिणतिस्वरूप जिस स्वरूप को आकार मिलता है; उसे व्यक्त करते हुए दिनकर कहते हैं - "जब भी दो जातियाँ मिलती हैं, उनके संपर्क या संघर्ष से जिन्दगी की एक नई धारा फूट निकलती है, जिसका प्रभाव दोनों पर पड़ता है। आदान-प्रदान की प्रक्रिया संस्कृति की जान है और इसी के सहारे वह अपने को जिंदा रखती है।... सांस्कृतिक दृष्टि से वह देश और वह जाति अधिक शक्तिशाली और महान समझी जानी चाहिए जिसने विश्व के अधिक से अधिक देशों, अधिक से अधिक जातियों की संस्कृतियों को अपने भीतर जज़्ब करके, उन्हें पचा करके बड़े से बड़े समन्वय को उत्पन्न किया है।"[1]

भारत में इस्लाम का उदय मुख्यतः दो रूपों में दिखाई देता है। एक भारत की केन्द्रीय सत्ता पर काबिज़ होने की उनकी जद्दोजहद के रूप में एवं दूसरा सांस्कृतिक समावेशिता के रूप में। दूसरी कड़ी में इतिहास के इस मध्यकाल में भारत में इस्लाम के कई सम्प्रदायों का आगमन हुआ। ये सम्प्रदाय जहाँ तत्कालीन स्थानीय संस्कृति से बड़ी मात्रा में प्रभावित हुए तो वही इसने यहाँ की स्थानीय संस्कृति को खुद भी प्रभावित कर 'सामासिक संस्कृति' की इस बेजोड़ यात्रा में अहम पड़ाव जोड़ा।

तत्कालीन हिन्दू समाज की सहिष्णुता का पता इसी से लगाया जा सकता है कि मुसलमान आक्रमणकारियों ने जब देश की केन्द्रीय राजनीतिक सत्ता पर अपना आधिपत्य जमा लिया, तब भी मुसलमानों के सूफ़ी जैसे मानवीय संवेदना से ओतप्रोत सम्प्रदाय का भरपूर आदर यहाँ किया गया। किन्तु यह आदर भी अपनी ही सीमाओं में आबद्ध था। इस सम्बन्ध में 'संस्कृति के चार अध्याय' में दिनकर लिखते हैं -"जब मुसलमानों के सूफ़ी सन्त भारत में घूमने लगे, तब आदर तो उनका हिन्दुओं ने भी किया, लेकिन हिन्दू इन सन्तों को भी अपने घर के भीतर

नहीं ले जाते थे, न अपने बरतन में उन्हें भोजन करने देते थे।"[2]

यह ऐसा समय था, जब मुसलमान शासक आम जनता के प्रति बेहद कठोर व्यवहार दिखा रहे थे। मुसलमान धर्मगुरु मौलवियों का उन शासकों पर भी प्रभाव प्रचुर मात्रा में था । परन्तु, जनता की राह सत्ता की राह से जुदा थी। आम जन द्वारा किए जाए रहे इस व्यवहार पर दिनकर की टिप्पणी उस समय के साम्प्रदायिक और सद्भावनापूर्ण दोनों चित्र प्रस्तुत करती है - "लोगों को इस राह पर आने का प्रोत्साहन इस बात से भी मिला कि मुस्लिम सूफ़ी सन्त सल्तनत की नीति से बँधे नहीं थे, न मुल्लों का सहयोग ही उन्हें प्राप्त था । सल्तनत और मुल्ले, अक्सर सन्तों का विरोध करते थे।"[3]

दरअसल यह सामयिक सत्य था कि खिलजी के राज में ही सूफ़ियों के प्रति जनता के मन में आदर बढ़ने लगा था। फलतः देश के हिन्दू और आम मुसलमान पर उनका पर्याप्त प्रभाव छा रहा था । सूफ़ी चूँकि स्वभावतः मानवीय संवेदना से पूर्ण थे, अतः सत्ता पर काबिज़ कट्टर सुल्तान भी उनसे ईर्ष्या करने लगे थे । किन्तु भारतीय समाज की विशेषता रही है कि यहाँ सकारात्मक परिवर्तन की दिशा तय करने में सत्ता से ज़्यादा महत्त्वपूर्ण भूमिका जनता निभाती है। "गियास उद्दीन ने हज़रत निज़ाम उद्दीन औलिया को धमकी दी थी कि अमुक तारीख को दरबार में हाज़िरी दो, नहीं तो तुम्हें दण्डित होना पड़ेगा। कहते हैं औलिया साहब दरबार तक तो नहीं गए, लेकिन निर्धारित तिथि के पहले ही गियास उद्दीन का कत्ल हो गया।"[4] इस प्रकार की घटनाएँ इस बात की द्योतक हैं कि एक ओर तो मुसलमान सत्ताधीशों की कट्टरता आम हिन्दू और मुसलमानों के बीच भी हावी थी, परन्तु वहीं दूसरी ओर सामासिक संस्कृति की रचना यात्रा में सूफ़ी सन्त अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन बखूबी कर रहे थे। जिससे भारतीय समाज में सहिष्णु एवं सद्भावनापूर्ण वातावरण के निर्माण की अपेक्षा की जा रही थी।

इस समय कलन्दर नामक मुसलमान समूह का भी भारत में प्रवेश हुआ। ये लोग यहाँ-वहाँ घूमा करते थे। इस्लाम के मुख्य सिद्धांत से सूफ़ी बहुत हद तक अलग थे। इस्लाम का परिचय सीधी-सरल कट्टरता और बाह्य अनुष्ठानों पर केन्द्रित था। सूफ़ियों ने भारत आकर हिन्दुओं से बहुत कुछ भिन्न तत्त्व ग्रहण किए । यही मुख्यतः सामासिक संस्कृति की रचना का धरातल है। दरअसल भारतीय संस्कृति को इस्लाम का वास्तविक प्रदेय कुछ है तो वह प्रच्छन्न रूप में ही है अर्थात सूफ़ियों के साथ हुआ सांस्कृतिक मिश्रण। सामासिक संस्कृति की इस रचना में सूफ़ियों और हिन्दू संस्कृतियों की तूलिकाओं से किस प्रकार विविध रंगों की निर्मितियाँ हुईं, इन रंगों ने कैसे गंगा-जमूनी तहज़ीब कही जाने वाली सामासिक संस्कृति को आकार दिया, इस पर दिनकर ने तथ्य प्रस्तुत करते हुए कहा - "इस्लाम सीधा-सादा कट्टर धर्म था जिसमें बाहरी अनुष्ठानों पर बहुत जोर दिया जाता था। अब वह एक प्रकार का जटिल भक्ति मार्ग बन गया जिसमें योग, चमत्कार, अंधविश्वास, भजन, कव्वाली, पीरों की पूजा और हिन्दू धर्म की बीसियों दूसरी बातें प्रविष्ट हो गईं। इस्लाम में गुरु परम्परा का जोर उतना नहीं था जितना भारत में आकर बढ़ा।"[5]

भारत में सूफ़ियों का आगमन प्रमुख सामाजिक घटना थी। इससे समाज में नवीन विचारों का जन्म हुआ। इन्हीं विचारों ने हमारी संस्कृति में विविध साधनाओं का समावेश किया। मजे की बात यह है कि आज भी आम हिन्दुस्तानी की इस प्रकार की साधनाओं पर गहरी आस्था है। साहित्य के क्षेत्र में यह साधना इश्के-हकीकी से इश्के-मज़ाज़ी की यात्रा करवाती है। वहीं भारतीय समाज में इस साधना ने ईश्वरीय सत्ता की दिव्यता को अनुभूत करने का मार्ग प्रशस्त किया। इस सम्बन्ध में दिनकर ने कहा है-

"सूफ़ी निर्मुक्तचिंतक थे और उनका उद्देश्य लोगों को डाल से उतारकर मूल की ओर ले जाना था। वे मनुष्यों को यह शिक्षा देते थे कि धर्म के बाहरी अनुष्ठानों में फँसकर तुम असली धर्म से दूर हो रहे हो। डाल से उतरकर नीचे की ओर देखो, सभी धर्म एक हैं और एक ही धर्म मूल से उपर उठकर, अनेक डालियाँ बनकर बिखर गया है। सच्चा धर्म अलग-अलग डालों पर बैठकर कोलाहल मचाने में नहीं, बल्कि मूल पर पहुँचकर शान्त हो जाने में है। धर्म कोलाहल नहीं, शान्ति है, धर्म विवाद नहीं, नीरवता है। धर्म युद्ध नहीं, मैत्री और प्रेम है।"[6]

हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में सूफ़ियों का योगदान महत्त्वपूर्ण रहा है। उन्होंने जो काव्य लिखे, उनकी कथाएँ आम हिन्दू घरों की दास्तान है। ये साहित्य ग्रंथ हिन्दू राजाओं, भारतीय वेश-परिवेश के आख्यान हैं। भक्तिकाल में रचित यह साहित्य सामासिक संस्कृति के धरातल की वास्तविक निर्मिति करता है। हिन्दी साहित्येतिहास लेखन के पुरोधा रामचन्द्र शुक्ल का इस सम्बन्ध में कथन है - "हमारा जो अनुमान है कि सूफ़ी कवियों ने जो कहानियाँ ली हैं वे सब हिन्दुओं के घरों में बहुत दिनों से चली आती हुई कहानियाँ हैं जिनमें आवश्यकतानुसार उन्होंने कुछ हेर-फेर किया है। कहानियों का मार्मिक आधार हिन्दू है। मनुष्य के साथ-साथ पशु-पक्षी और पेड़-पौधों को भी सहानुभूति सूत्र में बद्ध दिखाकर एक अखण्ड जीवन समष्टि का आभास देना हिन्दू प्रेम कहानियों की विशेषता है। मनुष्य के घोर दुख पर वन के वृक्ष भी रोते हैं। पक्षी भी संदेसे पहुँचाते हैं। यह बात इन कहानियों में भी मिलती है।

वास्तव में तत्कालीन हिन्दी साहित्य लेखन के क्षेत्र में सूफ़ियों ने अपना योगदान देकर 'सामासिक संस्कृति' का बड़ा उपकार किया है। असंख्य सूफ़ियों के सांस्कृतिक मिश्रण के सत्प्रयास आज भले इतिहास की बातें हो चुकी हों; किन्तु प्रेमाख्यानक कथा परम्परा में सृजित काव्य 'सामासिक संस्कृति' के जीवन्त स्वरूप का चित्र प्रस्तुत करते हैं। सांस्कृतिक मिश्रण की इस प्रक्रिया में सूफ़ियों का अंश उल्लेखनीय रहा। इस योगदान के कारण भारतीय संस्कृति की सामासिकता के गुणों में वृद्धि हुई।

सामासिक संस्कृति वास्तव में भारतीय जीवन मूल्यों एवं विविध आचरण पद्धतियों का मिश्रण है। इस मिश्रण में सनातन समाज की विस्तृत अहिंसा, मुस्लिम समाज की प्रवृत्तिमार्गी अवधारणा आदि निहित हैं। इस तरह की संस्कृति की रचना में सूफ़ियों का प्रदेय इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि शारीरिक गठन में भले वे मुसलमान जान पड़ते रहे हों, उनकी भाषा भले फारसी रही; तथापि हिन्दुत्व की मानवीय करुणा को उन्होंने अपने में आत्मसात कर लिया। इसी प्रकार इन सन्तों के विचारों का हिन्दू जनता ने भी बड़ा आदर किया एवं आज भी विविध सूफ़ी स्थलों पर आम हिन्दुस्तानियों की श्रद्धा देखते ही बनती है। समग्रतः दिनकर विरचित 'संस्कृति के चार अध्याय' में 'सामासिक संस्कृति' के निर्माण में सूफ़ियों की भूमिका का यही सार है। सच तो यह है कि ठेठ इस्लाम ने सूफ़ी सम्प्रदाय को जितना सहारा नहीं दिया, उससे कहीं अधिक प्रश्रय यहाँ की जनता के हृदय में इन सन्तों को मिला, चूँकि उन्होंने सांस्कृतिक पार्थक्य की जगह समन्वय की राह अख्तियार की।

सन्दर्भ सूची:

1. रामधारी सिंह 'दिनकर', रेती के फूल, पृ. सं. 129
2. वही, संस्कृति के चार अध्याय, पृ. सं. 322
3. वही, पृ. सं. 323
4. वही, पृ. सं. 323
5. वही, पृ. सं. 324
6. वही, पृ. सं. 328
7. रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. सं. 72

शोधार्थी, हिंदी विभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय

आधुनिकता का पुनर्पाठ : स्त्री लेखन के संदर्भ में

डॉ संगीता नायर / डॉ जेस्टिन के कुरियाकोस

'आधुनिकता' एक विकासमान अवधारणा है। एक ऐसी मानसिकता है जो प्राचीन से अलग है, जिसमें अंधविश्वासों, रूढ़ियों एवं जड़ परंपराओं के खिलाफ विद्रोह वर्तमान है और आधुनिक शिक्षा यानी कि अंग्रेज़ी शिक्षा की देन है। भारतीयों के आधुनिक बनने के पीछे उपनिवेशी शक्तियों के साथ भारत की सुधारवादी संस्थाओं, पत्र- पत्रिकाओं, विभिन्न दर्शनों आदि की भूमिका प्रबल रही है। यह विज्ञान जनित बुद्धि या मनोवृत्ति है जो तर्काश्रित है। इसीलिए डॉ. इंद्रनाथ मदान ने कहा 'प्रश्न चिन्झ की निरंतरता में आधुनिकता की प्रक्रिया है जो समसामयिकता के माध्यम से व्यक्त हो रही है।"[1] अतीत के परिप्रेक्ष्य में वर्तमान की समझ और भविष्य की दृष्टि आधुनिकता में वर्तमान है।

हिन्दी सहित्य पर नज़र डालें तो आधुनिक साहित्य की शुरुआत भारतेन्दु से है। स्वतंत्रता प्राप्ति तथा विभाजन के पहले तक का जो साहित्य है वह आधुनिक है। उसमें अपने समय के जीवन यथार्थ को नये ढंग से, अन्धविश्वासों एवं अनाचारों से संघर्ष करते हुए जीवन को गतिशील बनाने का उपक्रम सक्रिय रहा। स्वाधीनता प्राप्ति तथा उसके साथ हुए विभाजन की विभीषिका ने भारतीय जन मानस को अनास्था एवं निराशा के कगार पर खड़ा कर दिया। पूर्ववर्ती साहित्यिक संवेदना में भविष्य को लेकर जो आस्था थी वह समाप्त हो गयी। मोहभंग और अनास्था की यह स्थिति आधुनिक भावबोध का ही परिणाम था।

हिन्दी साहित्य में आधुनिक बोध या आधुनिकता की सशक्त अभिव्यक्ति स्वाधीनोत्तर परिवेश में दिखाई देती है। स्वतंत्रता परवर्ती हिन्दी साहित्य एक ओर अस्तित्व दर्शन से या अस्तित्वगत स्थितियों के यथार्थ से जुड़ती है तो दूसरी ओर सामाजिक दर्शन और सामाजिक यथार्थ से। यह समय की माँग थी।

यही वजह है कि आधुनिकता का यह दौर स्त्री लेखन पर भी भारी पड़ रहा था। नयी कविता में अस्तित्व की जो छटपटाहट एवं समाज प्रतिबद्ध होने का दावा पुरुष कवि करते आये हैं, कवयित्रियाँ इनसे दूर नहीं थीं। इन्होंने भी अपनी सृजनात्मकता का परिचय दिया है। इसके बावजूद इन्हें साहित्येतिहास में वह स्थान नहीं मिल पाया जिसका वे हकदार हैं।

आलोच्य युग के पूर्व समाज सुधारकों ने नारी समस्या को राष्ट्रीय समस्या के रूप में उठाया तथा उसकी स्थिति को बेहतर बनाने की कोशिश की, किन्तु किस हद तक यह इतिहास बताता है। आधुनिकता के संदर्भ में आकर उसके मन में भी प्रश्न चिह्न उठा। एहसास हुआ कि स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं। कवयित्री कांता की ये पंक्तियाँ- "पहले खोना, खोकर पाना/ फिर पाकर खो देना/ अर्से तक यों ही गुज़रती गयी ज़िन्दगी"[2]

यह साफ दर्शा रही हैं कि स्त्री के हित में कुछ भी स्थिर नहीं था जिससे उसका व्यक्तित्व रूपायित हो सके। जागरण की स्थिति में उसे इस बात का एहसास हुआ है कि वह अब तक पराई शर्तों पर यात्रा कर रही थी। शकुंत माथुर कहती हैं- "यह तो अच्छा ही हुआ मैं, /शब्दों का खेल जान गई। /तुम बोलो कहीं कुछ भी/ इससे पहले ही /तुम्हारे मन को पूरा नाप गई।"[3]

यहाँ उनका विद्रोह है जहाँ वे शिक्षा की महत्ता को स्वीकारते हुए स्त्री लेखन की सार्थकता की ओर इशारा कर रही हैं। दासता के भीषण अभिशाप से जागी नारी के अंदर जन्मी प्रतिशोध की चिनगारी सुमन राजे की पंक्तियों में द्रष्टव्य है - "आखिर मैंने तुम्हें पहचान लिया है/ इस अंतिम पहचान के बाद /बचाव का कोई रास्ता /शेष नहीं रहता। /मैंने जो लिखा वही जिया है।"[4]

एक ओर विद्रोह की आग भड़क उठी तो दूसरी ओर आधुनिकता के मोहभंग से उपजी निराशा एवं विवशता का स्वर भी मुखरित है वहाँ वह खुद को बंधनग्रस्त पाती है। वह कहती है - "किसी को भी न तोड़ सकती हूँ/ न छोड़ सकती हूँ।"[5]

ये पंक्तियाँ इस ओर संकेत कर रही हैं कि स्त्री की मुक्ति

अपने-आप में सीमित नहीं है। वह मुक्त होना तो चाहती है किन्तु कुछ भी खोना नहीं चाहती। यह समझ तो बहुत पहले से है।किन्तु इसके आगे घुटने टेकना तो वह नहीं चाहती । वह डरी ज़रूर थी, किन्तु मरी नहीं, अगर मरती तो डर ही मर जाता। डर के आगे तो जीत है।'सबूत क्यों चाहिए' नामक अपने संकलन में कवयित्री इन्दु जैन ने ऐलान किया-"किताबें तेरा अस्त्र हैं/ दिमाग शस्त्र।"[6]

अर्थात् शिक्षा ग्रहण करो और सोचो। शिक्षा प्राप्त कर, बौद्धिक विकास पाकर नारी अपने स्वत्व को तलाशने लगी। अपने मार्ग की बाधाओं को समझने लगी। इसीलिए तो आगामी समय (समकालीन समय) 'नागफनी के बीहड़ घेरों के बीच निर्भय-निस्संग मुस्कराती चंपा' से हमारा परिचय कराता है। अपने अंदर की चेतना को, अपने अस्तित्व को पूरे संसार के लिए समर्पित करने की जो इच्छा समकालीन कवयित्रियों में देखने को मिलती है, उसकी जड़ें तो स्वाधीनोत्तर आधुनिकता की चरम सीमा में ही मौजूद थी जहाँ कीर्ति चौधरी कहती हैं- "मैं बादल सा उमड़ूँगा/मरुस्थल पर छा जाऊँगा/ मैं फसलों सा उग/ बंजर धरती पर लहराऊँगा/ किरणों का हाथ पकड़/ अंधियारी राह बताऊँगा।"[7]

इन पंक्तियों में एक स्त्री की जिजीविषा और अपनी जययात्रा में किसी को चोट पहुँचाये बिना, अपने जैसे हाशियेकृतों को अपने साथ लेकर चलने की ललक है। साथ ही भाषा के नाम पर हो रहे लिंग-भेद पर प्रश्न चिह्न भी लगाया गया है। पंक्तियों में पुल्लिंग क्रिया' का प्रयोग मिलता है।

मनुष्य की स्वतंत्रता की जो कामना स्वतंत्रता परवर्ती हिंदी साहित्य में सक्रिय रही वह तत्कालीन स्त्री कविता का भी अभिन्न अंग था। इसके साथ ही तत्कालीन सामाजिक यथार्थ के विभिन्न आयामों को समझने और उनसे सरोकार रखने से भी स्त्री कविता का यह दौर अछूता नहीं रहा।

मार्क्सवादी - समाजवादी विचारधारा के प्रचार-प्रसार तथा वैज्ञानिक चेतना के विकास के फलस्वरूप आलोच्य युगीन कवयित्रियाँ शोषितों का पक्ष लेती तथा शोषकों के प्रति अपना तीव्र आक्रोश प्रकट करती हैं। हमारे समाज में कृषक, श्रमिक जैसे सर्वहारा वर्ग की तादाद बहुत बड़ी है। आलोच्य युग में यह भारी तादादवाला वर्ग ही शोषकों का सबसे बड़ा शिकार हुआ है। भूख की समस्या का एक मात्र समाधान रोटी है। इस रोटी के लिए इन जन साधारण को क्या कुछ नहीं करना पड़ता, क्या-क्या नहीं सहना पड़ता। सुमन जी के शब्दों में - "'मिलों के भोंपू के नीचे/रोज़ किसी विरहा किसी कजरी की टांग/कट जाती है।/ रोज किसी आल्हा की मूँछें /साहब के पैरों पर झुक जाती है/ रोज किसी गोबर की धरती /उसके पैरों के नीचे से खिसक जाती है।"[8]

पेट की परवाह करते-करते कहीं इन बेसहारों की बची-कुची ज़मीन हाथ से निकल जाती है तो कहीं काम करते-करते हाथ-पैर कट जाते हैं।उनका अस्तित्व औरों के लिए कोई मायना नहीं रखता। विश्राम का नाम लेना ही असंगत है। इंदु-जैन की ये पंक्तियाँ - " वे मशीन से ठंडे कमरे में / सिर्फ इतनी देर रुक कर /निकले आते हैं / कि पसीना भी सूख नहीं पाता/रुमाल फिर गीला हो जाता है।"[9]

निर्बाध गति से काम करके बेगार रहने के लिए अभिशप्त श्रमिक जीवन की ओर इशारा कर रही हैं। आखिर यह सारी स्थितियाँ और किसी की नहीं अपितु पूँजीवादी समाज की उपज है।ग्रामीण जीवन की त्रासदी भी इससे अलग नहीं थी।

औद्योगिक विकास के साथ भारत के गाँव शहरों में तब्दील होने लगे। नये महानगर जन्म लेने लगे। जब युग बदलता है तो पूरी संस्कृति भी बदल जाती है। शहरीकरण और पश्चिमीकरण के परिणाम स्वरूप उपजे आत्मकेंद्रित व्यक्तिकी विभिन्न झाँकियों को कवयित्रियों ने दर्ज किया है। "घर, कहाँ है घर अब/ किसी के पास,अब सिर्फ/ मकान है मकान / ईंट चूने /गारे और मिट्टी के जिनमें/आदमी रहते हैं/ चीजें रहती हैं /अब नहीं है हमारे पास घर /मकान है और चीज़ों की एक फेहरिस्त /पड़ोसियों की तुलना में अपनी/बढोत्तरी दिखाती हुई।"[10]

यहाँ जनता की उपभोगी मानसिकता को दर्शाया गया है जो आपनिवेशी माहौल की देन है। सांस्कृतिक परिवर्तन या अपसंस्कृति जिसके शिकंजे में फँसकर एक फाशनपरस्त एवं खोखली जिन्दगी बितानेवाली जनता की ओर यहाँ इशारा है। पश्चिमी सभ्यता आत्मकेंद्रित स्वार्थी मनुष्य को

जन्म दे रही है। एक ऐसा जनसमुदाय उभरा जहाँ - "लोग उजले कपड़े पहनते हैं /लेकिन सड़क पर नहीं आते/सिर्फ बंद घरों से झाँकते हैं/ चिन्ता करते हैं और कायर बनते हैं।"[11]

महानगरीय जीवन के साथ मूल्य संकट की ओर भी इशारा है। स्वतंत्रता परवर्ती भारत के समाज की 'Use and throw' संस्कृति का प्रभाव मानवीय संबंधों पर भी द्रष्टव्य है। यही बात इंदु जैन ने यों शब्दबद्ध की कि चाँद-सूरज आसमान पर अच्छे लगते हैं, चिडियाँ और फूल डालपर, बच्चे माँ-बाप के साथ घर में और माँ-बाप के माँ-बाप काशी में।

औद्योगिक विकास के परिणाम स्वरूप जैसे-जैसे सामाजिक परिस्थितियाँ बदलती गयीं, वैसे प्रकृति का साथ भी छूटता गया। मनुष्य की आवश्यकताओं के बढ़ने के साथ प्राकृतिक संपदाएँ गायब होती गयीं। 'डुबाता गंदी झीलें/ बढ़ रहा है /आज यह चश्मा/ लिये ताज़ा नया पानी /चला आता है/यह चश्मा/उगाता है शहीदों को।"[12]

यहाँ बोतल पानी की संस्कृति की ओर इशारा है, जहाँ शीशे के बोतल में विषैला जल भरकर जनता को पिलाकर स्वार्थी मनुष्य शहीदों को जन्म देता है।

शहीदों को तो युद्ध भी जन्म देते हैं। स्वातंत्रयों भारत में भी चीन से एक और पाकिस्तान से तीन युद्ध हुए। युद्ध के कारण चाहे कुछ भी रहे हों लेकिन परिणति हमेशा भयावह ही रही। युद्ध की विभीषिकाओं को पहचानकर कवयित्री सुमन जी की लेखनी से उपजे ये शब्द कि - "कैसी भी हो/ गोरी काली या मटमैली/औरत ही चीथी जाती है /संगीनों की नोकों पर/ झुलाए जाते हैं/ शिशु मानव।"[13]

इस बात की पुष्टि करते हैं कि बच्चे और स्त्रियाँ ही अधिकतर शिकार बनते हैं, युद्ध के कारण चाहे कुछ भी हो। एक ओर बच्चे और स्त्रियों पर हो रहे अत्याचार तो दूसरी ओर विस्थापितों की समस्या जिन्हें अपनी ज़मीन से उखाड़ दिया गया। देश की हालत इस कदर नाजुक बन बैठी थी। परिस्थितियाँ ऐसी थी कि भारत आज़ाद हुआ और उसके बाद देश की समस्याएँ तथा राजनेताओं की नैतिकता का ह्रास जनता को देखने को मिला।

आज़ादी के बाद की मोहभंग की स्थिति और व्यवस्था के प्रति विद्रोह का स्वर यहाँ सुनायी पड़ता है। स्नेहमयी चौधरी अपनी आशंका व्यक्तकर रही हैं - "महँगाई बढ़ गयी है,/उधर लोगों ने कर दी भूख हड़ताल /वहाँ देश का सांस्कृतिक स्तर/भाषा के सवाल पर अटका है, /भविष्य क्या है अपना।"[14]

यहाँ साफ नज़र आ रहा है कि आज़ादी के पूर्व जनता जिस अभिशप्त ज़िन्दगी को जी रही थी आज़ादी के बाद की स्थिति उससे भी बदतर हो गयी है। कवयित्री भविष्य को लेकर चिंतित हैं। आज़ाद भारत की सरकार नई नीतियाँ बनाती गईं। जनता की हालत में कोई सुधार नहीं आया। आर्थिक दृष्टि से जनता शोषण के लिए बाध्य हुई। इंदु जैन के शब्दों में - "औसत से हैसियत की सीढ़ियाँ/तय कर दी है सरकारी नीतियों ने/देशभक्त हैं अनजाने ही /औसत आदमी /बराबर सरकार को कोसता हुआ/चलता तो उसी के/नीति शतक पर है।"[15]

सरकारी नीतियों के अधीन जीने के लिए विवश जनता की मानसिकता को दर्शा रही हैं जो चाहकर भी कुछ नहीं कर सकती।

अमृता भारती के शब्दों में - "अब आदमी की चमड़ी का/जूता पहननेवाले लोग राजा हैं /अहिंसक जूतों का व्यापार बढ़ रहा है /आदमी मारा नहीं जा रहा /अपनी चमडी के नीचे/ खुद ही मर रहा है।"[16]

अर्थात् नेतागण साधारण जनता को अपने पैरों तले दबाकर अपना अधिकार जमानेवाले हैं। बिना कुछ कहे, बिना कुछ किये यह शेषित जनता सबकुछ सहती है। इन्हीं के बल पर खड़ी है भारत सरकार, भारत की व्यवस्था। एक ओर समस्याएँ पूरे देश को निगल जाना चाहती थीं, दूसरी ओर देश के रक्षक, देश के नेता एवं कर्णधार, अपनी स्वार्थ-लिप्सा एवं पदलोलुपता के चक्कर में देश की तत्कालीन स्थिति से बेखबर थे। उन्हें खबर थी सिर्फ 'कुर्सी' की, राजनीति के कुर्सी की। इसीलिए तो सुमन राजे ने कहा- "संवेदन के तंतुओं को /भोथरा करने के/ षडयंत्र का नाम है सत्ता।"[17]

इसी तरह सत्ता की व्यावहारिक उदासीनता, पुलिस की गलत नीति, नेताओं की भ्रष्ट कार्यवाही आदि को

आलोच्य युग के स्त्री लेखन में अभिव्यक्ति मिली है। तत्कालीन सामाजिक एवं राजनीतिक विडंबनाओं के रहते हुए आम जनता के लिए जिन्दगी आगे बढ़ाना जंग लड़ने से कम नहीं था।

इस तथ्य से वाकिफ कवयित्रियों ने महसूस किया कि जिंदगी का सफर हो या मंजिल की राह, संघर्ष के बिना अधूरा है। कीर्ति चौधरी कहती हैं - "जो भी हो संघर्षों की बात तो ठीक है/बढ़नेवालों केलिए यही तो एक लीक है।"[18]

अर्थात् जीवन की जटिलता एक वास्तविकता है जिसे समझने में ही भलाई है। जिन्दगी में आगे बढ़ना है तो संघर्ष की एकमात्र रास्ता है। आधुनिकता के साहित्य की इस चरम सीमा पर ही समकालीनता की बुनियाद बनी है। आधुनिकता एक समग्र मानसिकता है। अर्थात् आधुनिकता के साहित्य में एक ओर वैयक्तिकता की प्रवृत्ति देखने को मिलती है तो दूसरी ओर सामाजिकता का। आधुनिकता की यही महक आलोच्य युगीन स्त्री कविता में भी विद्यमान है। कहने का तात्पर्य यह है कि इस दौर की स्त्री कविताएँ एक ओर स्त्री स्वतंत्रता की कामना करती हैं तो दूसरी ओर सामाजिक यथार्थ के नये पहलुओं को उजागर करती हैं।

इस संदर्भ में सप्तक की कवयित्रियाँ शकुंत माथुर के 'अभी और कुछ', 'लहर नहीं टूटेगी', कीर्ति चौधरी का 'कीर्ति चौधरी की कविताएँ', सुमन राजे का 'यात्रदंश', 'एरका', 'उगे हुए हाथों के जंगल', स्नेहमयी चौधरी का 'एकाकी दोनों', इंदु जैन का 'सबूत क्यों चाहिए', अमृता भारती का 'आज कल या सौ बरस बाद'आदि संकलनों में समाहित कविताएँ सराहनीय हैं।

आगे चलकर उपर्युक्त यही काव्य प्रवृतियाँ विभिन्न विमर्शों का रूप धारण करते हुए प्रकट हुई हैं। कवयित्रियों ने अपनी व्यक्तिचेतना को समष्टि चेतना के साथ जोडने की आकांक्षा रखी है। अर्थात् आधुनिकता की स्त्री कविता समग्रता की कविता है। इसकी अगली कड़ी है समकालीन स्त्री कविता जिसमें अपने समय के साथ गहराई में जुड़ने की गहरी समझ है।

संदर्भ संकेत

1. डॉ. इंद्रनाथ मदान, कविता और कविता, राजकमल प्रकाशन, प्र.सं 1967, पृ.49
2. कांता, माध्यम पत्रिका, अक 5, सितंबर 1966, पृ. 38.
3. शकुन्त माथुर, लहर नहीं टूटेगी, पृ. 9
4. सुमन राजे, उगे हुए हाथों के जंगल, पृ.51
5. शकुन्त माथुर, अभी और कुछ, पृ. 9
6. इंदु जैन, सबूत क्यों चाहिए, पृ. 87
7. कीर्ति चौधरी, कीर्ति चौधरी कविताएँ, पृ.90
8. सुमन राजे, यात्रा दंश, पृ. 23
9. इंदु जैन, सबूत क्यों चाहिए, पृ.66.
10. सुमन राजे, यात्रादंश, पृ.66
11. शकुंत माथुर, लहर नहीं टूटेगी, पृ.65
12. शकुंत माथुर, दूसरा सप्तक, पृ.58
13. सुमन राजे, यात्रादंश, पृ.9
14. स्नेहमयी चौधरी, एकाकी दोनों, पृ.39
15. इंदु जैन, सबूत क्यों चाहिए, पृ. 66.
16. अमृता भारती, आज कल या सौ बरस बाद, पृ. 165
17. सुमन राजे, एरका, पृ.96
18. कीर्ति चौधरी, कीर्ति चौधरी कविताएँ, पृ.67.

डा. संगीता नायर
असिस्टेंट प्रोफेसर, निर्मला कॉलेज
मूवाट्टुपुषा(स्वायत्त), केरल

डा. जेस्टिन के कुरियाकोज़
असिस्टेंट प्रोफेसर, मलयालम विभाग
नर्मला कॉलेज, मूवाट्टुपुषा

युवा पीढ़ी और जागृति

दीप्ति जे पणिक्कर

भारत के युवा केवल भविष्य का निर्माण ही नहीं करते हैं, बल्कि वर्तमान की दिशा भी तय करते हैं। 'युवा पीढ़ी और जागृति' का संबंध केवल सामाजिक चेतना या राजनैतिक सक्रियता से नहीं है, बल्कि यह उस समग्र मानसिक, सांस्कृतिक, बौद्धिक और नैतिक परिवर्तनशीलता की बात करता है, जो किसी भी राष्ट्र को प्रगति की ओर ले जाती है। यह जागृति आत्मबोध से शुरू होकर राष्ट्रबोध तक विस्तारित होती है। जब कोई युवा अपने अस्तित्व, अधिकारों, कर्तव्यों और सामाजिक ज़िम्मेदारियों को पहचानता है, तब वह एक जागरूक नागरिक के रूप में उभरता है।

बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में और इक्कीसवीं सदी की शुरु आत से भारतीय युवाओं के सोचने-समझने के ढंग में तेजी से परिवर्तन आया है। अब वे केवल नौकरी की तलाश तक सीमित नहीं हैं, बल्कि स्टार्टअप, सामाजिक उद्यमिता, नागरिक भागीदारी और वैश्विक मुद्दों में भी दिलचस्पी ले रहे हैं। युवाओं की यह मानसिकता दर्शाती है कि आज की पीढ़ी केवल उपभोक्ता नहीं, बल्कि रचनाकार और बदलाव की वाहक बन चुकी है। सोशल मीडिया, इंटरनेट, डिजिटल शिक्षा और वैश्विक संपर्कों ने युवाओं की दृष्टि का क्षितिज विस्तारित कर दिया है। वे अब अपने गाँव, कस्बे या शहर तक सीमित नहीं, बल्कि राष्ट्र और विश्व के नागरिक के रूप में अपनी भूमिका देख रहे हैं।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि आज की युवा पीढ़ी बहुपरतीय दबावों के बीच अपना रास्ता तलाश रही है। एक ओर पारंपरिक सांस्कृतिक मूल्य हैं, तो दूसरी ओर आधुनिकता और वैश्वीकरण के प्रभाव। शिक्षा, रोजगार, संबंधों और सामाजिक संरचना में निरंतर परिवर्तन हो रहे हैं, जिनसे युवाओं की मानसिकता, प्राथमिकताएँ और सोचने का तरीका प्रभावित हो रहा है। इस संक्रमणकाल में 'जागृति' की भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। यदि युवा जागरूक नहीं होंगे, तो वे या तो भटक सकते हैं या फिर सामाजिक एवं राजनैतिक शक्तियों द्वारा मोहरे की तरह उपयोग किए जा सकते हैं।

जागृति का सबसे पहला आयाम शैक्षणिक चेतना है। जब कोई युवा अपने अध्ययन के उद्देश्य और समाज के प्रति उसकी जिम्मेदारी को समझता है, तभी वह शिक्षा को केवल परीक्षा पास करने का साधन नहीं, बल्कि जीवन और समाज को समझने का माध्यम मानता है। आज भारत के विश्वविद्यालयों और शिक्षण संस्थानों में युवाओं का राजनीतिक, सामाजिक और बौद्धिक रूप से अधिक सक्रिय होना एक शुभ संकेत है। यह नई सोच, संवाद और विमर्श की भूमि तैयार कर रही है। हालाँकि इसके साथ-साथ शिक्षा व्यवस्था में बढ़ रही प्रतियोगिता, असमानता और निजीकरण जैसे मुद्दे भी सामने आ रहे हैं, जिनसे निपटने के लिए युवाओं को सजग और संवेदनशील बनना होगा।

दूसरा पहलू सामाजिक जागरूकता का है। आज युवा जाति, धर्म, लिंग, वर्ग और क्षेत्रीय असमानताओं को लेकर अधिक मुखर हैं। चाहे महिला अधिकारों की बात हो, दलित चेतना हो या पर्यावरण संरक्षण का मुद्दा- युवाओं ने प्रत्येक क्षेत्र में अपनी आवाज़ बुलंद की है। हाल ही के वर्षों में देशभर में अनेक छात्र आंदोलनों, अभियानों और ऑनलाइन मुहिमों में युवाओं की भागीदारी ने यह साबित किया है कि आज की पीढ़ी केवल तमाशबीन नहीं, बल्कि सक्रिय भागीदार है। हालांकि यह भी सही है कि इन आंदोलनों की सफलता तभी स्थायी हो सकती है, जब वे केवल भावनात्मक प्रतिक्रिया नहीं, बल्कि विचारशील और संगठित प्रयास के साथ चलें।

राजनीतिक दृष्टि से भी युवा पीढ़ी पहले की तुलना में अधिक जागरूक हुई है। पहले जहाँ राजनीति को भ्रष्ट, जटिल और अनावश्यक माना जाता था, वहीं आज का युवा उसे परिवर्तन का माध्यम मान रहा है। पंचायत से लेकर संसद तक, युवाओं की भागीदारी धीरे-धीरे बढ़ रही है। वोटिंग में हिस्सा लेना, नीतियों पर विमर्श करना, जनप्रतिनिधियों से सवाल पूछना - ये सभी लोकतंत्र की मजबूती के संकेत हैं। लेकिन इसी के साथ यह भी जरूरी है कि युवाओं में राजनीतिक शिक्षा, वैचारिक स्पष्टता और आलोचनात्मक सोच विकसित की जाए, जिससे वे किसी

भी प्रकार के उग्रवाद या अतिवाद से दूर रह सकें।

सांस्कृतिक चेतना भी आज की पीढ़ी के लिए अत्यंत आवश्यक है। पश्चिमी प्रभाव, उपभोक्तावाद और तकनीकी परिवर्तन के बीच अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़े रहना एक चुनौती है। लेकिन यह भी देखा गया है कि अनेक युवा पारंपरिक कलाओं, भाषाओं, संगीत, नृत्य और साहित्य की ओर लौट रहे हैं। सोशल मीडिया पर फोक म्यूजिक, कविता पाठ, लोक कला प्रदर्शन जैसी गतिविधियाँ युवाओं में सांस्कृतिक जागरूकता की मिसालें हैं। वे नए माध्यमों का प्रयोग कर अपने अतीत को पुनः प्रस्तुत कर रहे हैं, जो जागृति का अभिनव रूप है।

एक अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र है आर्थिक चेतना। आज का युवा नौकरीपेशा जीवन के साथ-साथ उद्यमिता की ओर भी अग्रसर हो रहा है। स्टार्टअप कल्चर, डिजिटल मार्केटिंग, फ्रीलांसिंग, क्रिएटिव इंडस्ट्रीज़ - इन सभी में युवाओं की भागीदारी बढ़ी है। वे केवल धन अर्जन नहीं, बल्कि सामाजिक प्रभाव पैदा करने की दिशा में भी कार्य कर रहे हैं। हालांकि बेरोजगारी, असमान अवसर, ग्रामीण-शहरी अंतर और आर्थिक अस्थिरता जैसी समस्याएँ भी युवाओं के सामने हैं, जिन्हें समझकर नीति निर्माताओं और समाज दोनों को समाधान निकालना होगा।

युवा जागृति केवल बाहरी स्तर पर नहीं होती, इसका एक आंतरिक आयाम भी है-आत्मबोध और नैतिक विकास। जब कोई युवा यह समझने लगता है कि उसका जीवन केवल व्यक्तिगत उपलब्धियों के लिए नहीं, बल्कि समाज के कल्याण के लिए भी है, तब उसमें एक सच्चे नागरिक के गुण प्रकट होते हैं। सेवा, सहानुभूति, संवेदनशीलता और समानता की भावना - यही तत्व हैं जो एक समृद्ध राष्ट्र की नींव रखते हैं। युवाओं में यह आंतरिक जागरूकता विकसित करने के लिए साहित्य, सिनेमा, दर्शन और आध्यात्मिक चिंतन की भूमिका भी कम नहीं है।

आज आवश्यकता है कि हम युवाओं के भीतर नवचेतना, आत्मबल और सामूहिक जिम्मेदारी की भावना विकसित करें। सरकार, शिक्षण संस्थान, परिवार और मीडिया - सभी को इस दिशा में सकारात्मक प्रयास करने होंगे। साथ ही यह भी जरूरी है कि युवाओं को केवल 'उम्मीद' या 'उपयोग' की वस्तु न मानकर, उन्हें स्वायत्त, निर्णयक्षम और सम्मानित नागरिक के रूप में स्वीकार किया जाए।

भारत के स्वतंत्रता संग्राम से लेकर आधुनिक सामाजिक आंदोलनों तक - हर मोर्चे पर युवाओं ने अपने विचार, संघर्ष और त्याग से इतिहास रचा है। आज की पीढ़ी भी उसी परंपरा की उत्तराधिकारी है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि उन्हें जागरूक किया जाए, प्रेरित किया जाए और विश्वास दिया जाए कि वे बदलाव ला सकते हैं। यदि युवा जागरूक होंगे, तो राष्ट्र निश्चित ही प्रगति करेगा।

इस लेख का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि 'युवा पीढ़ी और जागृति' केवल एक नारा नहीं, बल्कि एक सामाजिक आवश्यकता है। यह वह धारा है जो किसी भी राष्ट्र को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाती है। भारत जैसे देश में जहाँ संभावनाएं अपार हैं, वहीं चुनौतियाँ भी कम नहीं - ऐसे में युवा चेतना, समर्पण और जागरूकता ही वह आधार है, जो एक उज्ज्वल भारत की नींव रख सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. शर्मा, रमेश. 'भारतीय युवा और सामाजिक परिवर्तन'. राजकमल प्रकाशन, 2018.
2. त्रिपाठी, सुधा. 'समकालीन भारत में युवा चेतना'. वाणी प्रकाशन, 2019.
3. मिश्रा, अजय. 'युवाओं की भूमिका राष्ट्र निर्माण में'. नीलकमल प्रकाशन, 2020.
4. जोशी, रेखा. 'भारतीय संस्कृति और नई पीढ़ी'. प्रभात प्रकाशन, 2016.
5. यादव, शशिकांत. 'युवा मनः चुनौतियाँ और संभावनाएँ'. हिन्द युग्म प्रकाशन, 2021.
6. गोस्वामी, निशांत. 'डिजिटल युग में युवा और मीडिया'. केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, 2022.
7. Government of India. 'Youth in India 2022'. Ministry of Statistics and Programme Implementation.
8. United Nations. 'World Youth Report 2020'. Department of Economic and Social Affairs.

कूमट्टम हाउस

टूटूटी जं., कुमारनल्लूर - 686 016

केरल की लब्धप्रतिष्ठ हिंदी लेखिका प्रो (डॉ) एस तंकमणि अम्मा - व्यक्तित्व और सृजन वैभव

डॉ रंजिता राणी

सुदूर दक्षिणी प्रान्त केरल में जन्मी मलयालम भाषी हिंदी विदुषी डॉ.तंकमणि अम्मा हिंदी की सफल अध्यापिका, प्रतिभाशाली लेखिका, समर्थ अनुवादिका, अद्भुत वक्ता तथा राष्ट्रभाषा की प्रकृष्ट प्रचारिका के रूप में अपूर्व यश को प्राप्त कर गयी हैं। हिंदीतर प्रांत केरल के सहस्रों छात्र-छात्राओं के मन में राष्ट्रभाषा के प्रति प्रेम जगाने और उन्हें हिंदी पठन-पाठन की ओर उन्मुख करने का सराहनीय कार्य उन्होंने किया है। हिंदीतर क्षेत्र में जन्मी इस हिंदी सेवी महिला को 'सौहार्द सम्मान' (2000) प्रदान करते हुए उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनउ के प्रशस्ति पत्र पर उकेरी गयी पंक्तियाँ यहाँ उल्लेखन योग्य हैं- "हिंदी की वरदपुत्री डॉ.एस.तंकमणि अम्मा ने पता नहीं कैसे संभवतः भूल से सुदूर स्थित हिंदीतर प्रदेश केरल में जन्म लिया। किन्तु विधाता की यह भूल गुरु नानक देव द्वारा उनकी आवभगत करनेवाले ग्रामीणों को दिए गए आशीर्वाद -"तुम सब बिखर जाओ" के समान, व्याज स्तुति से हिंदी के प्रचार-प्रसार एवं विकास के लिए वरदान सिद्ध हुई। केरल के तिरुवनन्तपुरम में बैठी तंकमणि अम्मा आज हिंदी के विस्तार की लंबाई दक्षिणी समुद्रतट तक नाप रही हैं।"

तंकमणि अम्मा का जन्म 18 मार्च 1950 को केरल की राजधानी तिरुवनन्तपुरम जिले के करिक्ककम नामक गाँव में हुआ था। उनकी माताश्री श्रीमती सीतम्मा थी जिन्होंने भारतीय संस्कृति के उदात्त आदर्शों की सीख देकर अपनी पुत्री में सद्गुणों का संचार कर दिया था। उनके पिताश्री केरल के प्रारंभकालीन हिंदी प्रचारकों में अग्रणी प्रोफेसर आर.जनार्द्दनन पिल्लै जी थे जिनकी रग-रग में व्याप्त राष्ट्र प्रेम और राष्ट्रभाषा प्रेम से बचपन से ही तंकमणि अम्मा अभिभूत हो गयी थी। धन्य धन्य हैं वे पिताश्री जिन्होंने, सम्राट अशोक ने जिस प्रकार अपने पुत्र महेन्द्र और पुत्री संघमित्रा को बौद्ध धर्म प्रचारार्थ समर्पित कर दिया था, उसी प्रकार अपने बड़े पुत्र जे.रामचन्द्रन नायर तथा सुपुत्री तंकमणि अम्मा को राष्ट्रभाषा प्रचारार्थ समर्पित कर दिया।

तंकमणि अम्मा की प्रारंभिक शिक्षा गाँव की पाठशाला में हुई। विज्ञान को मुख्य विषय के रूप में लेकर उन्होंने प्री.डिग्री परीक्षा उत्तीर्ण की। हिंदीमय वातावरण में पली तंकमणि अम्मा को हिंदी के वरिष्ठ साहित्यकारों की कृतियों ने खूब आकर्षित कर लिया और हिंदी साहित्य के प्रति उनकी रुचि बढ़ गई। फिर क्या! पिताजी के सहयोगी मित्र एवं हिंदी के लब्ध प्रतिष्ठ साहित्यकार डॉ.एन.चन्द्रशेखरन नायर जी की प्रेरणा तथा अपने पिताजी के आशीर्वादों को शिरोधार्य कर उन्होंने मुख्य विषय के रूप में हिंदी ले ली और तिरुवनन्तपुरम के प्रसिद्ध महात्मा गान्धी कॉलेज में स्नातक कक्षा में भर्ती हुई। अपने पिताजी की कक्षाओं में बैठने का सुयोग भी उन्हें प्राप्त हुआ। बी.ए. परीक्षा प्रथम श्रेणी में सर्वप्रथम उत्तीर्ण वे तिरुवनन्तपुरम के यूनिवर्सिटी कॉलेज में एम.ए. में भर्ती हुई। एम.ए.की परीक्षा में भी वे केरल विश्वविद्यालय (उस समय केरल प्रांत में केवल एक ही विश्वविद्यालय था) से प्रथम श्रेणी में सर्वप्रथम, रेकार्ड अंक प्राप्त कर उत्तीर्ण हुईं। उस उपलक्ष्य में उन्हें प्रोफेसर चन्द्रहासन पुरस्कार भी प्राप्त हो गया। तदुपरांत कोच्चिन विश्वविद्यालय से डॉ.रामन नायर जी के मार्ग दर्शन में "आधुनिक हिंदी खण्डकाव्य" विषय पर शोध कार्य करके सन् 1977 में पीएच.डी. की उपाधि भी प्राप्त कर ली। शोध प्रबन्ध की मूल्यांकन समिति के अध्यक्ष थे डॉ.रामकुमार वर्मा जी जिन्होंने हिन्दीतर प्रांत से समर्पित उस शोध प्रबन्ध की भूरि-भूरि प्रशंसा की थी। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के प्रकाशन-अनुदान के तहत वह शोध प्रबन्ध सूर्य प्रकाशन, नई दिल्ली से प्रकाशित भी हो गया।

इस बीच केरल लोक सेवा आयोग द्वारा सरकारी महाविद्यालयों के प्राध्यापकों की चयन-सूची में वे सर्वप्रथम आयीं और उनकी नियुक्ति 1973 में मलाबार के सरकारी ब्रन्नन कॉलेज, तलश्शेरी में प्राध्यापिका के पद पर हो गई। पाँच साल बाद स्थानांतरित होकर तिरुवनन्तपुरम के यूनिवर्सिटी कॉलेज और महिला महाविद्यालय में आयीं। वहीं सेवारत रहते हुए केरल विश्वविद्यालय के पत्राचार पाठ्यक्रम संस्थान के हिंदी विभाग में उनकी नियुक्तिहुई। वहाँ रीडर के पद पर कार्यरत थी कि केरल विश्वविद्यालय में नये-नये शुरू हुए हिंदी विभाग के रीडर के पद पर वे नियुक्तहुईं। 1993 में प्रोफेसर के पद पर उनकी पदोन्नति हुई तथा सन् 2010

तक वे वहीं रहीं। सन् 2000 में वे हिंदी विभाग की अध्यक्षा बन गईं। सैंतीस साल लम्बे उनके अध्यापन काल को वे अपने जीवन की सुनहली घड़ियाँ समझती हैं तथा अपने सहस्रों शिष्यगणों को अपनी सब से अमूल्य और सबसे बड़ी संपत्ति मानती हैं। इस दौरान 95 (पंचानबे) उन्होंने एम.फिल छात्रों के लघुशोध प्रबन्ध का निर्देशन किया तथा 25 (पच्चीस) छात्रों ने उनके निर्देशन में शोधोपाधि भी प्राप्त कर ली। केरल विश्व विद्यालय के सेनेट तथा विद्या परिषद की वे सदस्या भी रहीं। प्राच्य अध्ययन संकाय की डीन के रूप में भी आपने सेवाएँ अर्पित कीं। सेवानिवृत्ति के बाद 2014 में वे कालिकट विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की विज़िटिंग प्रोफेसर के पद पर कार्यरत रही।

विद्यार्थी जीवन से ही साहित्य सृजन की ओर उनकी रुझान थी। बी.ए. की छात्रा रहते हुए वे महात्मा गाँधी कॉलेज की वार्षिक पत्रिका के हिंदी अनुभाग की संपादिका रही थीं। उनकी प्रारंभिक कविताएँ उसी में प्रकाशित होकर आयीं। अपने अध्यापकीय जीवन के दौरान उनकी लेखकीय प्रतिभा और चमक उठी। 'केरल ज्योति' पत्रिका में उनकी आलोचना, निबन्ध आदि बराबर प्रकाशित होती थीं। ग्रंथ रूप में उनकी पहली रचना 'मलयालम के खण्डकाव्य' का प्रकाशन 1976 में हुआ जिसकी भूमिका हिंदी के प्रकाण्ड पण्डित एवं काव्यशास्त्री आचार्य डॉ.राममूर्ति त्रिपाठी जी (उज्जैन) ने लिखी थी। यह रचना उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनउ से पुरस्कृत हुई थी। आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी जी द्वारा हस्ताक्षरित प्रमाणपत्र को लेखिका ने अपूर्व निधि के समान सुरक्षित रखा है। सन् 1989 में प्रकाशित 'संस्कृति के स्वर' उनकी बहुचर्चित रचना है जिसकी भूमिका दिल्ली विश्वविद्यालय के प्राचार्य एवं सुविख्यात रामकथा मर्मज्ञ डॉ.रमानाथ त्रिपाठी जी (दिल्ली) ने लिखी है। इस ग्रंथ पर उन्हें केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, दिल्ली का पुरस्कार मिला था। 'हिंदी कविता : नये-पुराने परिदृश्य', 'मलयालम पत्रकारिता का इतिहास' आदि भी उनके प्रौढ़ ग्रंथ हैं।

उत्तर भारत से प्रकाशित आजकल (दिल्ली), अनुमेहा (लखनउ), कोमा (कानपुर), अंजलि (भोपाल), स्पांबरा (कोलकत्ता) अंजुरी (दिल्ली) जैसी पत्रिकाओं में समय-समय पर लिखी उनकी कविताएँ प्रकाशित हुई हैं। 'सावन-भादों' शीर्षक काव्य संकलन में भी उनकी कविताएँ संकलित हुई हैं। इसके आधार पर 1995 में अखिल भारतीय साहित्यकार अभिनंदन समिति, मथुरा ने उनको 'आधुनिक सुमित्राकुमारी सिन्हा' संज्ञा से अभिहित किया है।

अनेक कोश ग्रंथों और संदर्भ ग्रंथों में उनके आलेख प्रकाशित हुए हैं। 1988 में मथुरा से प्रकाशित 'राधाकृष्ण भक्तकोश' में मलयालम के कृष्ण भक्तों और कृष्ण तीर्थों पर तथा 1992 में वाराणसी से प्रकाशित 'श्रीराम विश्वकोश' में केरल में राम संस्कृति विषय पर उनके आलेख प्रकाशित हुए हैं। 2019 में तक्षशिला प्रकाशन, दिल्ली से प्रकाशित 'आधुनिक भारतीय साहित्य' शीर्षक प्रौढ़ ग्रंथ में 'आधुनिक मलयालम साहित्य' पर आलेख डॉ.तंकमणि अम्मा द्वारा लिखित है। केन्द्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा प्रकाशित 'भाषा' तथा 'वार्षिकी' पत्रिकाओं में भी उनके शोधपरक एवं सर्वेक्षणात्मक आलेख स्थान पा चुके हैं। 'विश्वविवेक' (अमेरिका), 'पुस्तक-भारती' (कनाड़ा) जैसी अंतर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में भी उनके आलेख प्रकाशित होकर आए हैं। इनके अलावा केरल तथा बाहर से प्रकाशित 'समकालीन भारतीय साहित्य', युगस्पंदन, नया ज्ञानोदय, दस्तावेज़, वसुधा, अग्रतारा, अक्षरा, समीक्षा, बहुवचन, पुस्तकवार्ता, अनुवाद, दक्षिण भारत, केरल ज्योति, अवध मणिप्रभा, अनुमेहा, कोमा, तुलसी मानस भारती, संग्रथन जैसी पत्रिकाओं में उनके तीन सौ से ज़्यादा आलेख प्रकाशित होकर आए हैं। "प्रेरक जीवनियाँ, कविता संकलन, सात एकांकी" जैसे कई ग्रंथों का संपादन भी उन्होंने किया है। केरल हिंदी प्रचार सभा की मुख पत्रिका 'केरल ज्योति' के कई सालों तक वे मुख्य संपादिका रही हैं। संप्रति आप 'शोध सरोवर पत्रिका' की प्रबन्ध संपादक तथा कनाड़ा से प्रकाशित अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका 'पुस्तक भारती' के निदेशक मंडल की सदस्या हैं। 'शोध-दर्पण' आपके द्वारा संपादित शोध पत्रिका है।

हिंदी से मलयालम तथा मलयालम से हिंदी में उत्कृष्ट साहित्य रचनाओं का अनुवाद करके तंकमणि अम्मा ने भारतीय साहित्यिक सांस्कृतिक समन्वयन की दिशा में भी बड़ा योगदान दिया है। भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित 'भारतीय कविताएँ' वर्ष 1985, वर्ष 1986, वर्ष 1987-88 में मलयालम के पाँच-पाँच श्रेष्ठ कवियों की पाँच-पाँच प्रतिनिधि कविताओं का जो अनुवाद तंकमणि अम्मा ने प्रस्तुत किया उसने अनुवादक के रूप में उन्हें बड़ी प्रतिष्ठा दी। काव्यानुवाद जो अक्सर दुष्कर समझा जाता है, उसमें तंकमणि अम्मा को आशातीत सफलता मिली है। मलयालम के महाकवि कुमारनाशान के प्रख्यात खण्डकाव्य 'लीला',

अय्यप्प पणिक्कर के बहुचर्चित काव्य 'गोत्रयानं' तथा ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता मलयालम कवि ओ.एन.वी.कुरुप के प्रख्यात काव्य 'स्वयंवरं' का हिंदी में अनुवाद उन्होंने क्रमशः 'लीला, गोत्रयान तथा स्वयंवर शीर्षकों से किया है। 'लीला' का प्रकाशन किया है कुमारनाशान राष्ट्रीय सांस्कृतिक संस्थान ने, गोत्रयान का प्रवीण प्रकाशन दिल्ली ने तथा 'स्वयंवर' का प्रकाशन वाणी प्रकाशन, दिल्ली ने किया है। 'स्वयंवर' पर उन्हें भारतीय अनुवाद परिषद् का 'द्विवागीश पुरस्कार' प्राप्त हुआ है। ओ.एन.वी.कुरुप की फुटकर कविताओं का एक संकलन 'एक धरती, एक आसमान, एक सूरज' शीर्षक से भारतीय ज्ञानपीठ की ओर से प्रकाशित हुआ है। इनके अलावा करीब डेढ़ सौ कविताओं का अनुवाद भी उन्होंने किया है जो विविध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित है।

केरल के जटायु पर्यटन केन्द्र के विशालकाय पक्षी शिल्प के प्रवेश द्वार के शिलाफलक पर ओ.एन.वी.कुरुप की कविता का 'जटायु स्मृति' शीर्षक से जो अनुवाद उत्कीर्णित है, वह तंकमणि अम्मा की अनुवाद-प्रतिभा का उद्घोषक है।

तंकमणि अम्मा के काव्यानुवाद विविध स्तरों के पाठ्यक्रमों में भी स्थान पा चुके हैं। केरल सरकार की उच्च माध्यमिक कक्षा की हिन्दी पुस्तक में स्थान प्राप्त 'कुमुद फूल बेचनेवाली लड़की' शीर्षक कविता, पांडिचेरी विश्वविद्यालय के बी.ए. स्तर के पाठ्य ग्रंथ में स्थान प्राप्त 'स्वयंवर' तथा केरल केन्द्रीय विश्वविद्यालय के एम.ए. स्तर पर स्थान प्राप्त 'एक धरती एक आसमान एक सूरज' जैसी कृतियाँ काव्यानुवादक के रूप में तंकमणि अम्मा को प्राप्त स्वीकृति की द्योतक हैं।

मलयालम के लब्धप्रतिष्ठ नाटककार एवं रंगकर्मी वयला वासुदेवन पिल्लै के तीन नाटकों 'अन्दर कोई'(युक्ति प्रकाशन), 'बरसी' (वाणी प्रकाशन) तथा 'करारनामा' (लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद) का अनुवाद भी तंकमणि अम्मा ने किया है। इन नाटकों के अनुवाद में के.जी.बालकृष्ण पिल्लै जी उनके सहयोगी रहे हैं। मलयालम की समकालीन कहानी लेखिकाओं में प्रमुख चन्द्रमति की कहानियों का अनुवाद 'चन्द्रमति की कहानियाँ' शीर्षक से उन्होंने किया है जो 2020 में प्रकाशित है। 'मलयालम की लोकप्रिय कहानियाँ' शीर्षक से प्रभात प्रकाशन, दिल्ली ने भी तंकमणि अम्मा द्वारा अनूदित मलयालम के प्रतिनिधि कहानीकारों की प्रतिनिधि कहानियों का संकलन प्रकाशित किया है। 'मलयालम की लोकप्रिय कहानियाँ' शीर्षक से प्रभात प्रकाशन, दिल्ली ने भी तंकमणि अम्मा द्वारा अनूदित मलयालम के प्रतिनिधि कहानीकारों की प्रतिनिधि कहानियों का संकलन प्रकाशित किया है। भारतीय ज्ञानपीठ के मूर्ति देवी पुरस्कार सम्मानित मलयालम के सुप्रसिद्ध साहित्यकार सी.राधाकृष्णन के श्रेष्ठ जीवनपरक उपन्यास 'तीक्कटल् कटंजु तिरु मधुरं' का अनुवाद उन्होंने 'अग्निसागर से अमृत' शीर्षक से किया जो भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित है। 'आस्मान मेरा हमसफ़र' शीर्षक से के.सी.चन्द्रशेखरन पिल्लै की कहानियों के अनुवाद का एक संकलन वैभव प्रकाशन, रायपुर से प्रकाश में आया है। 'एन.कृष्ण पिल्लै' शीर्षक ग्रंथ साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित है जो एषुमट्टूर राजराजवर्मा द्वारा लिखित उसी शीर्षक के मलयालम ग्रंथ का अनुवाद है।

हिन्दी से मलयालम में अनूदित उनके उपन्यासों में के.एल.कमल का 'कर्मयोगी', मृदुला गर्ग का 'कठगुलाब', चित्रा मुद्गल का 'आवाँ' आदि प्रमुख हैं। उनकी कई अनूदित रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में भी प्रकाशित हैं।

केरल प्रांतीय तथा राष्ट्रीय स्तर की कई महत्वपूर्ण संस्थाओं के विविध पदों पर वे विराजमान रही। केरल की प्रतिष्ठित हिंदी संस्था केरल हिंदी प्रचार सभा की कई सालों तक उपाध्याक्षा एवं अध्यक्षा के पद पर रहकर उन्होंने हिंदी के प्रचार प्रसारार्थ कई कार्य किए। वे केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा की शासी परिषद् तथा शिक्षण मंडल की सदस्य भी रही थीं। श्रीशंकराचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय कालड़ी की कार्य परिषद् की सदस्या के रूप में उन्होंने कार्य किया। महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय की प्रथम विद्यापरिषद् में तथा दो बार कार्य परिषद में सदस्या रहीं। भारतीय ज्ञानपीठ की 43, 44 तथा 45 वीं पुरस्कार चयन समिति में 2010 से 2012 तक वे भाषा सलाहकार समिति भी संयोजिका रहीं तथा दो बार मूर्तिदेवी पुरस्कार चयन समिति की सदस्या भी रही। संप्रति आप संस्कृति मंत्रालय के अधीनस्थ टैगोर फैलोशिप चयन समिति की सदस्या के रूप में कार्यरत हैं। भारत सरकार के कृषि मंत्रालय तथा पंचायती राज मंत्रालयों की हिंदी सलाहकार समिति की सदस्या भी रह चुकी हैं।

तंकमणि अम्मा को यात्राएँ खूब पसन्द हैं तथा उन्होंने कई बार देश-विदेश की यात्राएँ की हैं। देश के अधिकांश

प्रांतों के अलावा, अमेरिका, लंदन, नेदरलैंड्स, जर्मनी, फ्रांस, इटली, रोम, वत्तिक्कान, स्विट्ज़रलैंड, दक्षिण अफ्रीका, सूरीनाम, माँ रीशस, श्रीलंका, दुबाई, अबूदाबी, थाईलैंड, सिंगापुर, मलेशिया आदि की यात्राएँ उन्होंने की हैं। जहाँ-जहाँ गईं वहाँ की हिंदी की गतिविधियों को निकट से देखने-परखने का प्रयास भी उन्होंने किया है।

शताधिक राजभाषा, राष्ट्रभाषा सम्मेलनों तथा साहित्य सम्मेलनों में कभी अध्यक्षा, उद्घाटक, बीजवक्ता, संयोजिका आदि की भूमिकाओं में वे रहीं। 2003 में सूरीनाम में आयोजित सातवें विश्व हिंदी सम्मेलन में उन्हें विश्व हिन्दी सम्मान से अलंकृत किया गया। तदनंतर आठवें, नवें, दसवें तथा ग्यारहवें विश्व हिंदी सम्मेलनों में भी भाग लेने तथा अपना वक्तव्य देने का सुअवसर उन्हें मिला है।

राष्ट्रभाषा राजभाषा के क्षेत्र में किए गए उल्लेखनीय कार्यों तथा उत्कृष्ट साहित्य सृजन के लिए तंकमणि अम्मा की खोज में कई पुरस्कार एवं सम्मान आए हैं। ठीक ही कहा गया है - न रत्नमन्विष्यति मृग्यते हि तत्।" उन्हें प्राप्त पुरस्कारों में प्रमुख हैं - प्रो.चन्द्रहासन पुरस्कार(1971), उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान साहित्य पुरस्कार (1976), केन्द्रीय हिंदी निदेशालय पुरस्कार (1989), साहित्य वागीश (नई दिल्ली) (1991), सर्वश्रेष्ठ दक्षिणी रचनाकार पुरस्कार, दक्षिण भारत हिंदी प्रतिष्ठान, हैदराबाद (1994), द्विवागीश पुरस्कार, भारतीय अनुवाद परिषद दिल्ली- 1999, विशिष्ट हिंदी सेवा पुरस्कार, राष्ट्रीय हिंदी अकादमी, कलकत्ता-1999, सौहार्द पुरस्कार, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान 2000, विश्व हिंदी सम्मान (सूरीनाम 2003), राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार, केन्द्रीय हिंदी संस्थान आगरा(2002),(तत्कालीन राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम जी द्वारा वितरित), साहित्य वाचस्पति (मानद उपाधि) हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग 2012, उत्कृष्ट हिंदी समन्वयश्री सम्मान, विश्वव्यापक हिंदी संचार केन्द्र, मिज़ोराम 2012, साहित्य सिन्धु सम्मान, अखिल भारतीय साहित्य कला मंच, मुरादाबाद 2012, सूर्या अंतर्भारती भाषा सम्मान, सूर्या संस्थान, नोएड्रा-2015, ओजस्विनी अलंकरण, ओजस्विनी पत्रिका, भोपाल-2015, गुरु पूजा पुरस्कार, निराला हिंदी अकादमी-2017, शताब्दी सम्मान, बिहार हिंदी साहित्य सम्मेलन, पटना-2019 आदि।

पुरस्कारों को लेने में नहीं, हिंदी भाषा और साहित्य के नाम पर हिंदी के छात्र-छात्राओं और रचनाकारों को विविध प्रकार के पुरस्कार देने में भी वे अनुपम आनन्द का अनुभव करती हैं। केरल विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग से सर्वाधिक अंक पाकर एम.ए परीक्षा में उत्तीर्ण छात्र को सन् 2011 से वे प्रतिवर्ष ढाई हज़ार रुपए का पुरस्कार देती हैं। अपने इलाके से हिंदी में सर्वाधिक अंक पाकर उत्तीर्ण होनेवाले दसवीं और बारहवीं कक्षा के छात्रों को भी वे प्रतिवर्ष एक-एक हज़ार रुपये का पुरस्कार प्रदान करती हैं। हर साल पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित शोध आलेखों में सर्वोत्तम का चयन कर शोधार्थी को नकद पुरस्कार दिया जाता है। अपने पिताश्री प्रो.आर.जनार्द्दनन पिल्लै जी नाम पर भी 'अखिल भारतीय हिंदी अकादमी' के वार्षिक सम्मेलन में प्रतिभाशाली छात्र-छात्राओं को नकद पुरस्कार देकर उन्हें प्रोत्साहित करती हैं।

केन्द्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा प्रकाशित हिंदी साहित्यकार - विवरणिका और हिंदी लेखक संदर्भिका (1991) में तथा केरल क्षेत्रीय हिंदी साहित्य का इतिहास (हैदराबाद, 1977), केरल के हिंदी साहित्य का बृहद् इतिहास, केरल के हिंदी साहित्य का इतिहास, केरल राज्य सर्व विज्ञान कोश संस्थान द्वारा प्रकाशित 'विश्व साहित्य विज्ञान कोशं' (मलयालम-2009) जैसे संदर्भ ग्रंथों और इतिहास ग्रंथों में तंकमणि अम्मा के जीवन और साहित्य सृजन संबन्धी उल्लेख उपलब्ध हैं।

"डॉ.एस.तंकमणि अम्मा का मौलिक और अनूदित साहित्य" विषय पर शोध कार्य करके इन पंक्तियों की लेखिका ने सन् 2020 में केरल विश्वविद्यालय से पीएच.डी की उपाधि प्राप्त की है।

संप्रति तंकमणि अम्मा तिरुवनंतपुरम के अपने घर 'मणि मंदिरम' में हिंदी से जुडे विविध कार्यक्रमों में व्यस्त रहती हैं। उनके पति प्रो.सुरेन्द्रनाथ सेवानिवृत्त प्रोफेसर (गणित) हैं जो हिंदी प्रेमी और साहित्यानुरागी हैं जिनका सतत प्रोत्साहन तंकमणि जी को अपने अकादमिक एवं सृजनात्मक कार्यों में मिलता रहता है। इकलौता पुत्र अनूप नाथ न्यूजर्सी में सॉफ्ट वेयर इंजीनियर हैं तथा पुत्रवधु प्रीता अनूप नाथ इलक्ट्रोनिक्स इंजीनियर हैं। पौत्री कुमारी अनामिका नाथ आठवीं कक्षा की छात्रा है। हिंदी के प्रति पूरे परिवार की निष्ठा और आस्था अनुकरणीय है। संप्रति आप हिंदी के प्रचार-प्रसार संबन्धी कार्यों और साहित्य सृजन में निरत होकर हिंदी के लिए समर्पित अपना जीवन बिता रही हैं।

डॉ.रंजिता राणी, प्रणवम, पिरियाकोट
ऊरूट्टंबलम, तिरुवनंतपुरम

'शिफ्ट, कंट्रोल, ऑल्ट = डिलीट' भूमण्डलीकृत समय में 'डिलीट' होती संवेदना की कहानी

पंकज पाण्डेय / डॉ राशि पाण्डे

शोध सार : मूलतः कथा में आदर्शवादी दृष्टिकोण रहा है। आधुनिक समय में कथा का रूप विकसित हुआ और इनमें घटनाओं के मध्य कार्य-कारण संबंधों के साथ भिन्न-भिन्न स्थितियों का चित्रण या प्रत्यक्षीकरण भी पाया जाने लगा, जिसे कहानी कहा गया। इस प्रकार, कहानी में कथा के आदर्शवादी तथा नैतिकतावादी दृष्टिकोण के स्थान पर यथार्थवादी दृष्टिकोण प्रमुख हो गया। हिन्दी कहानी भी अपने समय और समाज के यथार्थ से प्रभावित रही है। भारत में आर्थिक उदारवाद की नीति लागू होने के पश्चात उत्पन्न हुई जटिल सामाजिक आर्थिक सांस्कृतिक तथा तकनीकी स्थितियों के अंकन आज की कहानियों में देखे जा सकते हैं। लेखिका आकांक्षा पारे काशिव की जनवरी 2014 में हंस में प्रकाशित कहानी 'शिफ्ट,कंट्रोल,ऑल्ट = डिलीट' कंप्यूटरीकृत समय में मशीन तथा मनुष्य के संबंध के बहाने ख़त्म हो रही संवेदनाओं की पड़ताल है। यह कहानी न केवल संवेदना के धरातल पर बल्कि शिल्प के आधार पर भी चकित करती है।

बीज शब्द- कहानी, भूमण्डलीकरण, संवेदना, शिल्प, कंप्यूटर, इक्कीसवीं सदी, वैश्वीकरण

मूल आलेखः बड़ी तेजी से दुनिया बनती जा रही है एक बड़ा गाँव/लोभ क्रोध ईर्ष्या द्वेष के लिए अब/कहीं और नहीं जाना पड़ता/मनुष्यों के संबंध बहुत पतले तारों से / बांध दिए गए हैं जो बात-बात में टूट जाते हैं/-(मंगलेश डबराल की कविता 'भूमण्डलीकरण' से)

आकांक्षा पारे काशिव की कहानी 'शिफ्ट,कंट्रोल,ऑल्टडिलीट' इस बदले हुए समय में मनुष्यों के टूट रहे संबंधों तथा ख़त्म हो रही संवेदना की पड़ताल है। आधुनिक समय महत्वपूर्व हो गई तकनीकी, जिसके बिना जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकते हैं, ने मनुष्य के संबंधों पर ही प्रश्न चिह्न लगा दिए हैं। कहानी के मुख्य पात्र सुदीप मलिक के बयान की और कहानी की पहली पंक्ति "मैंने कुछ नहीं किया।"[1]

सुदीप द्वारा अपनी पत्नी की हत्या के बाद यह बयान दिया गया है।इस बयान में किसी भी किस्म का दुख और पश्चाताप नहीं है बल्कि, एक किस्म का ठंडापन है। इस ठंडेपन के चलते वह संवेदनहीन हो चुका है, इस सीमा तक है कि वह जीवन में मनुष्य होने की शर्तों का अतिक्रमण कर लेता है।"[2]

कंप्यूटर में कूट भाषा का प्रयोग कर कंप्यूटर प्रोग्राम में आदेश दिया जाता है। कंप्यूटर पर काम करते-करते वह अपने कार्य व्यवहार में भी कंप्यूटरीकृत हो जाता है। कंप्यूटर पर 'काउंटर स्ट्राइक' गेम खेलते हुए वह यूएस सोल्जर्स की तरफ से हथियार चला रहा होता है तथा गेमिंग कंसोल के माध्यम स्क्रीन पर धड़ाधड़ यूएस सोल्जर टेरेरिस्टों का सफाया कर रहा होता है। चूँकि, वह पिछली तीन हफ्तों से अपने दोस्त से यह गेम हार रहा होता है इसलिए जीत के लिए उसकी तलब इस हद तक बढ़ती है कि पत्नी, अनुरीता द्वारा लगातार "आवाज कम करो, लैपी बंद कर दो, पिछले छह घंटे से तुमने घर में शोर-शराबा कर रखा है"[3] कहने पर भी वह गेम ही खेलता जा रहा था क्योंकि "कल किसी भी सूरत में मुझे उसे काउंटर स्ट्राइक गेम में हराना था।"[4] अनुरीता के बार-बार कहने पर भी जब जब वह नहीं माना तो अनुरीता ने उसके हाथ से कंसोल छीन लिया और लैपटॉप बंद करना चाहा। इसी के चलते वह गेम जीत नहीं पाया और उसने अनुरीता के सर पर बेसबॉ?ल बैट से मारकर हत्या कर दी- "और उसने कंसोल छीन लिया. वह लैपी शट डाउन करने के लिए झपटी, उसे म्यूट करने की सारी कोशिश के बीच मैंने...सिर्फ कंप्यूटर में फाइल हटाने का परमानेंट आप्शन यूज किया, शिफ्ट,कंट्रोल,ऑल्ट डिलीट।"[5] यह ऐसा ही है जैसे किसी कम्प्यूटर को हत्या करने के लिए आदेश दे दिया गया हो। फिर चाहे वह गेम का टेररिस्ट हो या मनुष्य।

काउंटर स्ट्राइक जैसे कोई भी गेम, में जिसमें जीत

केवल इस बात पर निर्भर होती है कि किसी भी पक्ष द्वारा कितने लोगों को मारा गया है, निश्चित रूप से हमें जीवन के प्रति असंवेदनशील ही बनाते हैं।यही असंवेदना हमारे विवेक को भी कुंद करती है। सुदीप की असंवेदनशीलता इस सीमा तक बढ़ गई कि कंप्यूटर गेम में किसी टेररिस्ट को न मार पाने की खींझ उसमें इतनी अधिक हो जाती है कि इसकी एवज़ में वह अपनी पत्नी की हत्या कर देता है और उसे किसी भी प्रकार का अपराध बोध नहीं है। वह अदालत में कहता है कि "मैंने कुछ नहीं किया. मैं बस गेम जीतने ही वाला था।"[6] इसके अतिरिक्त, हत्या के लिए उसकी उत्कंठा इतनी अधिक है कि कंप्यूटर गेम में 'टेररिस्ट' को मार पाने का विकल्प उपलब्ध न होने पर वह विवेकशून्य हो जाता है और उसकी पत्नी ही उसे 'टेररिस्ट' लगने लगती है।

सुदीप द्वारा अनुरीता के साथ किया गया यह व्यवहार उस व्यवहार की पराकाष्ठा है जो इंस्टीट्यूट में पढ़ाई के दौरान उसके द्वारा अपनी क्लासमेट के साथ 'वर्ल्ड ऑफ़ वॉर क्राफ्ट' कंप्यूटर गेम खेलते हुए किया गया। इस गेम में भी वह फ़ाईटर जीतता था जिसके पास अधिक हथियार जमा होते हैं। गेम हारने पर सुदीप अपनी क्लासमेट पर झपटा, "उसने मुझसे कहा मैं तब तक कमरे से बाहर नहीं जा सकती जब तक वह यह गेम दोबारा खेल कर जीत नहीं जाता।"[7]

हार्वे डी ने अपनी पुस्तक 'द कंडीशन ऑफ़ पोस्ट मॉडरनिटी' (1989) में भूमण्डलीकरण / वैश्वीकरण को समय और स्थान की गति और गहनता से जुड़ा बताया। भूमण्डलीकरण के चलते पूरी दुनिया में शुरू हुए आर्थिक उदारवाद ने समाजिकता को कमजोर किया तथा निजी स्वतंत्रता के नाम पर व्यक्तिवाद को स्थापित करने का काम किया है।इसी के चलते निजी उपलब्धि को जीत समझ लिया गया है तथा प्रगति गति का प्रयाय बन गई है। "सामाजिकता के विरुद्ध वैयक्तिक महत्वाकांक्षाओं के पल्लवन की इस नियति के मूल में जिन दो शब्दों की बहुत बड़ी भूमिका है, वे हैं- जीत और गति।"[8] यही जीत और गति सुदीप मलिक के बयान और संवाद में दिखाई पड़ती है- "मैं गेम जीत रहा था। और उसने कंसोल छीन लिया (जीत)"[9] तथा दोस्त के द्वारा सुदीप के विषय में जो मालूम पड़ा वह यह कि "सुदीप तो उनको (प्रो रामास्वामी को) पी जीरो (बहुत धीमा) प्रोसेसर कहता था।"[10], "सुदीप हंसा और बोला साला 80-85 माइक्रोप्रोसेसर (पुराना तथा धीमा) तू तो हमेशा पी जीरो प्रोसेसर का प्यारा रहेगा रे।"[11] इसके साथ ही इसी दोस्त के मार्फ़त यह पता चलता है कि सुदीप के लिए गति के क्या मायने हैं "अभी तो उसने एक मस्त नया टैब खरीदा था। उसका प्लान था, आई फोन-5 लाँच होते ही वह उसे भी खरीद लेगा। ही इज क्रेजी अबाउट गैजेट्स।"[12] वह गति के लिए इतना प्रतिबद्ध है कि उसे समय स्थान का तक ध्यान नहीं रहता। कोर्ट में उसकी फाँसी की सजा जब टाइपराइटर से लिखी जा रही थी तब भी वह कहता है- "आप लोग कंप्यूटर इस्तेमाल नहीं करते? इस जमाने में भी टाइप राइटर?. उसने इस हिकारत से कहा जैसे टाइपराइटर का इस्तेमाल हत्या से बड़ा अपराध हो।"[13]

राकेश बिहारी 'विनर्स डोंट डू डिफरेंट थिंग्स, दे डू द थिंग्स डिफरेंटली' के बहाने हमारे भीतर रोप दी गई जीत की महत्वकांक्षाओं को संवेदनहीन क्रूरताओं का कारण मानते हैं। "सुदीप मलिक के भीतर लगातार पल रही जीत की आकांक्षाओं और उस संभावित जीत की दहलीज पर पहुँचते-पहुँचते रह जाने की स्थिति के बाद उत्पन्न संवेदनात्मक त्रासदी से गुजरते हुये मुझे मैनेजमेंट गुरु शिव खेड़ा की बहुचर्चित-बहुप्रचारित किताब "यू कैन विन'/ 'जीत आपकी' की लगातार याद आती रही। क्या इसके पीछे येन केन प्रकारेण जीत हासिल करने की सीख देने वाली उन अत्याधुनिक व्यावसायिक सूक्तियों का कोई हाथ नहीं जो चीख-चीख कर कहती हैं -'विनर्स डोंट डू डिफरेंट थिंग्स, दे डू द थिंग्स डिफरेंटली?"[14]

भूमण्डलीकरण और अर्थव्यवस्था के उदारीकरण के माध्यम से हमारे भीतर अमरीकी मूल्यों- उपभोक्तावाद और व्यक्तिवाद तथा नैतिकता विहीनता - को भर दिया गया है। सुदीप एक टैब ख़रीदने के बाद आईफ़ोन को लॉच होते ही ख़रीद लेना चाहता था। इस बात पर विचार किए बिना कि उसे नए फोन की ज़रूरत है अथवा नहीं, सुदीप नया फोन ख़रीदना चाहता है जबकि यह आईफ़ोन अब तक 'लॉच' नहीं हुआ है। कहानी से इतर यह एक तथ्य है कि भारत में आज 70 प्रतिशत से अधिक आईफ़ोन ईएमआई या लोन पर ख़रीदे जा रहे हैं जबकि इससे भी सस्ते विकल्प

बाज़ार में उपलब्ध हैं।"[15] "यह चरम उपभोक्तावाद को ही स्थापित करता है कि अधिक उपभोग और अधिक वस्तुओं का स्वामी होने से अधिक सुख और खुशी मिलेगी।"[16] संवेदना के शून्य होने तक सतत रूप से डेटा/ तकनीक का उपभोग करने की उसकी लत को लेकर उसकी सहकर्मी कहती है कि "मुझे कोई आश्चर्य नहीं की उसने बेसबॉल के बैट से अनुरीता का सिर फोड़ दिया। फिर उसके टुकड़े कर डीप फ्रीजर में बंद कर ताला लगा कर चल दिया। और अपने स्मार्ट फोन से फेसबुक पर मैसेज पोस्ट करता रहा, ट्वीट करता रहा. वह इतना बेरहम, वहशी हो सकता है। बिलकुल हो सकता है।"[17]

इसके साथ ही, 'काउंटर स्ट्राइक' के नाम पर खेले जाने वाले गेम से इस विचार को स्थापित किया जा रहा है कि अमेरिका दुनिया भर में आतंकवाद के खिलाप लड़ रहा है जबकि, अमरीका दुनिया भर में सर्वाधिक (लगभग 42%) हथियारों का निर्यात करता है।"[18] इसी विचार से भरे हुए होने के चलते 'काउंटर स्ट्राइक' गेम खेलते हुए उसे लगता है कि वह आतंकवाद से लड़ रहा है- "आखिरी टेरेरिस्ट बस खत्म होने को था उसने मेरे हाथ से कंसोल छीन लिया।"[19] और यही विचार गेम के 'टेररिस्ट' और अपनी पत्नी में अंतर नहीं कर पाता। उसे इस बात का भी कोई अपराधबोध नहीं है कि उसने अपनी पत्नी को मार डाला- "आप समझ रहे हैं? समझ रहे हैं आप...मैं गेम जीत रहा था। और उसने कंसोल छीन लिया. वह लैपी शट डाउन करने के लिए झपटी, उसे म्यूट करने की सारी कोशिश के बीच मैंने...सिर्फ कंप्यूटर में फाइल हटाने का परमानेंट आप्शन यूज किया, शिफ्ट,कंट्रोल,ऑल्ट = डिलीट।"[20] चरम उपभोग हमें कितना कितना अनैतिक बनाता है इस स्तर पर यह कहानी संजय खाती की कहानी 'पिंटी का साबुन' का अगला पड़ाव मालूम पड़ती है, जिसका नायक साबुन का उपयोग किए जाने के कारण अपने काका पर हमला कर देता है। हाँ, वहाँ संवेदना बची हुई है जिस कारण काका नायक गोपी की शिकायत नहीं करता है।"[21] लेकिन यहाँ संवेदना डिलीट हो जाती है।

यह किसी देश की अर्थव्यवस्था के विकास का मॉडल भर नहीं बल्कि आर्थिक क्रिया-कलापों के बहाने दूसरे देशों की युवा प्रतिभाओं के मानसिक अनुकूलन की सुनियोजित रणनीति का हिस्सा है. सच है कि इतिहास का पुनर्लेखन सिर्फ इतिहास के पन्नों तक ही सीमित नहीं होता बल्कि उसका एक बड़ा और प्रभावी हिस्सा किसी सूक्ष्म रणनीति के तहत जीवन के अन्यान्य क्षेत्रों से गुजरता हुआ कब हमारे दैनंदिनी का हिस्सा बन जाता है, हमें पता ही नहीं चलता।"[22]

कहानी में उत्पादों से घिरे हर व्यक्तिको उपभोक्ता बनाए जाने की प्रक्रिया भी समझ आती है। उपभोक्ता में तब्दील होते ही मनुष्य संवेदनहीन होने लगता है। नियोक्ता पहले तो ऐसी सुविधाओं को अपना मुनाफा बढ़ाने के लिए देते हैं लेकिन इस मुनाफाखोरी से काम कर रहे कर्मचारियों पर और उनके निजी जीवन पर क्या प्रभाव पड़ रहा है इससे उन्हें कुछ भी मतलब नहीं। "बाकी पसर्नल लाइफ से हमें क्या करना है सर। *** हर फ्लोर पर टी-कॉफी मशीन्स हैं, पूरी बिल्डिंग सेंट्रली एयरकंडीशंड है। यहां तक कि टॉयलेट और कॉरीडोर में भी। हर डेस्क पर एपल मैक सिस्टम हैं सर। सभी को कंपनी की तरफ से लैपी भी दिए गए हैं। ताकि वक्त पडने पर ये लोग वर्क एट होम कर सकें।"[23]

नियोक्ता के द्वारा अपने बयान में यह बताया गया कि कार्यालयों में प्रदान की जा रही सुविधाओं के चलते कर्मचारी घर ही नहीं जाना चाहते हैं। वे रात दिन कार्यालयों में ही बिता कर हर सुविधा का उपभोग कर लेना चाहते हैं। "पर मैं एक बात बताउं सर अगर ये लोग चाहें न तो सुबह नौ से शाम छह बजे तक आराम से काम कर सकते हैं। लेकिन करते ही नहीं हैं। इन लोगों को न सर कंप्यूटर पर बैठने की लत लग गई है। मस्त एसी में बैठते हैं, दिन भर आमंड, लैमन, तुलसी फ्लेवर की चाय पीते हैं और रात को खूब गेम और फिल्में डाउनलोड करते रहते हैं। यहां 5 एमबीपीएस की स्पीड से डेटा ट्रांसफर कर सकते हैं सर! 5 एमबीपीएस! घर पर ये सुविधा कहां मिलेगी सर।"[24] "संबंध और संवेदना जो कभी घर का आधार हुआ करते थे, को जब सुविधाओं के आकलन के अर्थशास्त्र ने विस्थापित कर रखा हो फिर घर जाने की जरूरत ही क्या?"[25]

समस्याओं को देख समझ लेने पर भी आँखें मूँदे रखना भूमण्डलीकृत समय की एक पहचान बन गई है और

तब तक इन पर ध्यान नहीं दिया जाता है जब तक कि अधिक मुनाफ़ा पैदा करने स्थितियाँ पैदा न हो जाए। और मुनाफ़ा यदि हो रहा हो तो कोई भी पुराना उत्पाद, नए से बदल दिया जाता है। "जो कुछ भी है सब ख़त्म होगा एक बढ़िया उत्पाद से या बढ़िया तरीक़े से या बढ़िया संगठन से या बढ़िया रणनीति से।"[26] कहानी में मनोचिकित्सक कहता है "एक युवा कंप्यूटर इंजीनियर ने जब अपनी पत्नी की हत्या कर दी तो हम सब जागे हैं। यह मामला ठंडा हो जाएगा और हम फिर अपने-अपने काम में इस किस्से को भूल जाएंगे।"[27] इस व्यवस्था के लिए न चाहते हुए भी हम विद्यार्थियों को तैयार कर रहे हैं। सुदीप के कॉलेज के इंडियन टेक्निकल इंस्टीट्यूट के रिटायर प्रोफेसर कहते हैं कि -"हमारे कॉलेज की शानदार बिल्डिंग है, बड़ा खेल का मैदान है। इनडोर-आउटडोर दोनों तरह के गेम के लिए अच्छी सुविधाएं हैं। फिर भी मैदान खाली पड़े रहते हैं। ज्यादातर स्टूडेंट भारी परदों से ढकी उस कंप्यूटर लैप में अपना समय गुजारते हैं, जहां पता ही नहीं चलता कब दिन ढला, कब बारिश हुई, कब खूबसूरत शाम बीत गई। लैब में हर स्टूडेंट अपनी दुनिया में गाफिल है। उसे अपने आस-पड़ोस से भी कुछ लेना देना नहीं है। कॉलेज के चारों हॉस्टल वाई-फाई हैं। रही-सही कसर यहां पूरी हो जाती है। कंप्यूटर स्क्रीन के अलावा वे दुनिया को किसी और माध्यम से समझना ही नहीं चाहते।"[28]

सामाजिक अलगाव इस कहानी का एक अन्य महत्वपूर्ण बिंदु है। सुदीप हर समय कंप्यूटर पर बैठा रहता था। उसे इस बात से फर्क नहीं पड़ता है कि उसके आस-पास कोई बैठा है। उसकी मित्र अपने बयान में कहती है कि मैं कहती थी, जब देखो यह प्लास्टिक पीटा करते हो। स्क्रीन से सिर उठा कर कभी मेरी शक्ल भी देख लिया करो। अरे मैं तुमसे बोल रही हूं। सुन रहे हो। मैं बक नहीं रही। जब देखो लैपटॉप में सिर दिए बैठे रहते हो। 29 प्रेम और साहचर्य जैसे कोई भी भाव उसके जीवन में ही नहीं हैं। "मुझे लगता था कि वह मुझसे प्यार करता है, क्योंकि पूरी क्लास में वह सिर्फ मुझ से ही बात किया करता था। लेकिन धीरे-धीरे मैंने समझा वह बस अपने कंप्यूटर से ही प्यार कर सकता है।"[30]

इस पूरी प्रक्रिया में वह समाज से ही कट जाता है। वह अपने साथियों से सीधे बात न कर फेसबुक पर चैट करता था। सामाजिक अलगाव के चलते वह अदालत में यही निर्णय सुनाया जाता है कि- "मुलजिम समाज से बिलकुल कट चुका है और उसे अपने किए पर कोई पछतावा भी नहीं है। उसने इस कत्ल में जिस बेरहमी का परिचय दिया है वह क्षमा योग्य नहीं है।"[31] किंतु इसी क्रम में वह स्वयं से कट जाता है, और उसे अपने अच्छे बुरे का भी कोई ध्यान नहीं रहता है। "उसका ध्यान जज की बात सुनने के बजाय कोने में लटक रही एक मकड़ी पर अटक था। मकड़ी लटक कर छत पर जाती और फिर झूल कर दोबारा छत पर पहुंच रही थी।"[32] उसे उसकी अंतिम इच्छा पूछे जाने पर वह जीवन के बजाय लॉच हुए नए गेम को खेल लेना चाहता है- "कहीं इंटरनेट कनेक्शन होगा क्या? निंजा एंड ग्लैडिएटर्स गेम का फिफ्थ पार्ट आने वाला था। सोच रहा हूं एक बार चैक कर लेता.."[33]

शिल्प के स्तर पर भी कहानी भूमण्डलीकृत हो रही संवेदनाओं को ठीक से प्रस्तुत करती है। पूरी कहानी कंप्यूटर की शब्दावली से भरी हुई है। यह इस समय का सच है कि हम अपनी सहज शब्दावली का प्रयोग नहीं कर रहे हैं। कहानी के नायक को भी 'गीक' कहा गया है। कहानी का शीर्षक ही कंप्यूटर की दुनिया से संबंधित है। "डेटा, डेटाबेस, प्रोग्रामिंग, जैसे अनेक प्रत्ययों, उपकरणों का जन्म हो चुका है, जो हमारे अब तक के ज्ञान मीमांसा क्षेत्र के लिए नितांत नए हैं। हमारे घर के बेटे यही भाषा बोल रहे हैं इन्हीं नये प्रत्ययों से वे इस यथार्थ का अभिग्रहण कर रहे हैं।"[34] बदली हुई संवेदना के प्रकटीकरण के संबंध में राकेश बिहारी कहते हैं "आज कहानी की परिधि में सिर्फ घटना या चरित्र प्रमुख नहीं होते हैं। कई बार घटनाएँ अनुषंग होती हैं और चरित्रों की मनःस्थितियाँ और उनके अन्तर्द्वन्द्व प्राणतत्त्व।"[35] इस कहानी में किसी एक रूप के माध्यम से कहानी नहीं कही गई है बल्कि, सुदीप के इकबालिया बयान, टीवी पर चल रही डिबेट, अदालत की कार्यवाही, दोस्तों-सहकर्मियों के कथ्य पर आधारित है। यह भूमण्डलीकृत समय की जटिलता के परिचायक के रूप में है कि यथार्थ सरल और सहज नहीं रहा गया है। इसलिए अनेक रूपों से जोड़ कर एक रूप बनाया गया है। यथार्थ की जटिलता के चलते ही सहज मानवीय भावों का संप्रेषण संभव नहीं रह

गया है। राकेश बिहारी रूप के संबंध में कहते हैं कि "अब तो कई बार कहानी, संस्मरण, रिर्पोताज, खबर, सूचना, इतिहास, दर्शन आदि के बीच की लकीरें भी मिटती-टूटती दिखाई देने लगी हैं।"[36]

निष्कर्ष- इस प्रकार आकांक्षा पारे काशिव की कहानी - 'शिफ्ट,कंट्रोल,ऑल्ट = डिलीट' भूमण्डलीकृत समय में मानवीय संवेदनाओं के डिलीट (समाप्त) होने की कहानी है। कहानी में हत्यारा इतना आत्मकेन्द्रित हो जाता है कि वह पत्नी की हत्या कर देता है। इस हत्या को वह मशीनी भाव से करता है जैसे कंप्यूटर को हत्या का कोई आदेश दिया गया हो। यह कहानी अपने कथ्य तथा शिल्प से जिस संवेदना का प्रसार करती है वह समय के साथ गहरा ही रही है।

संदर्भ

1. हंस, जनवरी 2014 , पृष्ठ 11
2. https://samalochan.blogspot.com/2014/07/2.html (गुम होती संवेदनाः राकेश बिहारी का लेख)
3. हंस, जनवरी 2014 , पृष्ठ 11
4. वही, पृष्ठ 11
5. वही, पृष्ठ 11
6. वही, पृष्ठ 11
7. वही, पृष्ठ 14
8. https://samalochan.blogspot.com/2014/07/2.html
9. हंस, जनवरी 2014 , पृष्ठ 11
10. वही, पृष्ठ 12
11. वही, पृष्ठ 13
12. वही, पृष्ठ 13
13. वही, पृष्ठ 14
14. https://samalochan.blogspot.com/2014/07/2.html
15. https://bit.ly/3ZbrkR4 Apple: Winning the market, one EMI at a time
16. https://hi.wikipedia.org/wiki/=पभोक्तावाद
17. हंस, जनवरी 2014 , पृष्ठ 14
18. https://bit.ly/47d4kmJ Market share of the leading exporters of major weapons between 2019 and 2023, by country
19. हंस, जनवरी 2014 , पृष्ठ 11
20. वही
21. हिन्दी कहानी वाया आलोचना, 2022 गाँव में उपभोक्तावाद का प्रवेश पेज 463
22. https://samalochan.blogspot.com/2014/07/2.html
23. हंस, जनवरी 2014 , पृष्ठ 13
24. वही
25. https://samalochan.blogspot.com/2014/07/2.html
26. Rediscovering Schumpeter: The power of capitalism https://bit.ly/3XbGUcJ
27. हंस, जनवरी 2014 , पृष्ठ 13
28. वही, पृष्ठ 13
29. वही, पृष्ठ 14
30. वही, पृष्ठ 14
31. वही, पृष्ठ 14
32. वही, पृष्ठ 14
33. वही, पृष्ठ 14
34. उदय प्रकाश, ईश्वर की आँख, वाणी प्रकाशन 1999, पेज 77
35. संतोष कुमार चतुर्वेदी (संपादक), अनहद, जनवरी 2011
36. हरि भटनागर (अंक संपादक), रचना समय, जनवरी-फरवरी 2016

शोधार्थी, हिन्दी विभाग;
डी एस बी कैंपस,
कुमाउँ विश्वविद्धालय नैनीताल
ईमेल pankajpandey@kunainital.ac.in
मोबाइल 9411358877

डॉ शशि पाण्डे
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग; डी एस बी कैंपस,
कुमाउँ विश्वविद्धालय नैनीताल

उषा यादव के उपन्यासों में परिवार का चित्रण

रेशमा एस

उषा यादव ने समकालीन हिंदी साहित्य में विभिन्न विधाओं पर लेखनी चलाई है। आधुनिक समाज की जटिलताओं को जनसाधारण का ध्यान आकर्षित करने के लिए उन्होंने उपन्यास विधा को अपनाया। समाज की हर बुराईयों को अपने उपन्यासों के माध्यम से प्रत्यक्ष किया गया है। इसलिए उनकी सभी उपन्यासों में मानवीय संबंधों का चित्रण देखने को मिलता है। उषा जी ने अपनी रचनाओं में रिश्तों का बदलाव, मानव का स्वार्थी दृष्टिकोण, पुरुष और नारी का एक दूसरे के प्रति बदलते नजरिए, व्यक्तिगत पहचान का संकट, आर्थिक विषमता, सामाजिक संरचनाओं में बदलाव आदि का चित्रण किया है। उषा यादव के उपन्यासों में परिवार का बारीकी से चित्रण मिलता है।

मानव जीवन का आरंभ परिवार से होता है। मनुष्य से परिवार ,परिवार से समाज और समाज से देश बनता है। परिवार के अभाव में सामाजिक प्राणी की कल्पना करना संभव नहीं है। सामाजिक संरचना में परिवार सर्वोपरी है । परिवार व्यक्ति और समाज के बीच की कड़ी है। 'परिवार मानव जाति में आत्मसंरक्षण, वंशवर्धन और जातीय जीवन के सातत्य को बनाये रखने का प्रधान साधन है। मनुष्य मरण धर्मा है, किन्तु मानव जाति अमर है । व्यक्ति उत्पन्न होता है, बचपन, परम्परा, यौवन, बूढ़ापे की अवस्था भोगकर समाप्त हो जाता है, पर वंश परंपरा द्वारा उनका सन्तान - क्रम अविच्छिन्न रूप से चलता रहता है। मृत्यु और अमृतत्व दो विरोधी वस्तुएं हैं, किंतु परिवार द्वारा इन दोनों का समन्वय हुआ है। व्यक्ति भले ही मर जाए, पर परिवार और विवाह द्वारा मानव जाति अमर हो गई है।"[1]

सुखी परिवार के सृजन में नारी- पुरुष दोनों का सहयोग आवश्यक है। परिवार में नारी को दूसरा दर्जा न देकर समानता की दर्जा देना उचित है। आज परिवार में बदलाव आया है कि व्यक्ति परिवार केलिए व्यक्तिगत सुखों का बलिदान नहीं करना चाहता है। इसी कारण से सभी नैतिक एवं पारंपरिक संबंध चाहे पिता - पुत्र , पिता - पुत्री, बहन - भाई, माँ - पुत्र, माँ - पुत्री आदि संबंध में हीनता आ चुकी है। घर में ही विभिन्न रिश्तों के रूप में बैठे पुरुष वर्ग किसी न किसी रूप से नारी को शोषण करता है। पारिवारिक जीवन तभी खुश और संतोषजनक हो सकता है, जब पति - पत्नी में परस्पर स्नेह और सहयोग की भावना हो, पति और पत्नी के बीच का झगड़ा बच्चों के व्यक्तित्व पर पड़ता है। उषा जी ने अपने उपन्यासों में परिवारिक नारी की समस्याओं का चित्रण किया है।

'एक और अहल्या' (1991) उपन्यास की स्मिता नामक पात्र अपने परिवारजनों के विरोध के बावजूद कवि नवल से शादी करते हैं। बाद में उसे पता चलता है कि वह उनकी दूसरी पत्नी है। आँसू बहाने के अलावा उसके पास कोई रास्ता नहीं था। स्मिता कल्पना के आसमान से यथार्थ की जमीन पर आ जाती है। तब उसे उसकी गलती महसूस होती है।पति का कर्त्व्य पत्नी की सुख - दुख में सहचर करना है। उपन्यास में दो नारियों की ज़िंदगी को खिलवाड़ करनेवाली नवल के बारे में चित्रित किया गया है। "अनपढ़ - जाहिल पुरुषों के पत्नी को प्रताड़ित करने के उसने बहुत से दृश्य देखे - सुने थे,पर यहां तो एक सभ्य , शिष्ट और प्रभावशाली पुरुष का आचरण अपनी कुत्सित और घिनौनी साजिशों से मामूली मार - पीट जैसी हरकतों को बहुत पीछे छोड़े दे रहा था।"[2] नवल ने अपनी पहली पत्नी और पांच बच्चों को छोड़कर दूसरी शादी की। नवल केलिए शादी सिर्फ मज़ाक थी। पहली पत्नी को प्यार करने का नाटक करते हुए जूठी प्यारभरी चिट्ठी लिखी है कि अपनी पुत्रियों के लिए वर ढूंढो। वक्त पर वो रक्म भेज दूंगा । एक तरफ वो पहली पत्नी और बच्चों को विश्वासघात करता है। दूसरी तरफ दूसरी पत्नी की भावनाओं के साथ खेलता है।

'आंखों का आकाश' (1995) उपन्यास में उषा जी

ने निजता पर महत्व दिया है। प्रेम और विवाह के अनछुए पहलु इस उपन्यास में देखने को मिलता है। यह पारिवारिक सामाजिक रिश्तों के आधार बनाकर जीनेवाला परिवार की कहानी है । उपन्यास की केंद्र पात्र सुधी अपने घरवालों के खिलाफ सुहास से शादी करते हैं। सुधी की शादी पिता और पुत्री के बीच में अलगाव उत्पन्न करता है। इसकी सज़ा सुधी की बहन सुची को सहना पड़ता है। सुची की इच्छा के विरुद्ध छोटी उम्र में उसके पिता उसे शादी कराकर उसकी जिंदगी का नाश करती है। शादी के बाद सुधी की ज़िंदगी बहुत अच्छी थी। लेकिन सुचि की स्थिति दयनीय थी। ससुराल में सास और पति मिलकर रोज़ उसे मारती है। वह सोचती है कि "अपने ही माता - पिता और सगा भाई जब वैरी बन गए तो किसी और को वह क्यों दोष दे? अगर माता - पिता ने पढ़ा - लिखाकर अपने पैरों पर खड़ी होने के लायक बना दिया हो तो शायद वह किसी अन्याय के विरुद्ध की ,अपने पावों के नीचे से खिसकती धरती को संभाले रहने की पुरजोर कोशिश करती , पर दसवें में पढ़ने वाली एक लड़की ..... या औरत ..... अगर मैं पढ़ाई छोड़ देने के बाद त्रिशंकु की भांति लटकर रहने की स्थिति से कैसे बच सकती थी।"[3] लेकिन उसको अंत में आत्महत्या कर लेने की फैसला करना पड़ता है। इसी वजह से पिता को मन में बदलाव आता है और सुधि को स्वीकारता है । उपन्यास में अपनी बच्ची की ज़िंदगी ऐसे बर्बाद होने के कारण दुखी परिवारवालों की मानसिक संकीर्णताओं को चित्रित किया गया है।

'कितने नीलकंठ' (1998) उपन्यास में चन्दना की माँ बेटी का वैवाहिक संबंध अभय के साथ उसकी शादी करना चाहती है। लेकिन पिता लालची और शराबी है इसी कारण से वह अपनी बेटी को बूढ़े आदमी से शादी करना चाहता है। ऐसी शादी करने से पिता को पैसा मिलता है। 'अपनी योजना में विफल होने के बाद मनोहरलाल ने पूरी बेशर्मी और धांधलेबाजी के साथ कहना शुरू कर दिया कि वे अपनी बेटी की शादी वहीं करेंगे, जहाँ उनका जी चाहेगा। चूंकि वह शराबी - कबाबी किस्म का है, और जुए की लत भी पाले हुए है, इसलिए शहर के एक संपन्न विधुर से मिलनेवाली मोटी धनराशि के लालच में पड़कर चन्दना को वहां ब्याहने को कटिबद्ध है।"[4] चन्दना पिता से लड़कर अभय से शादी करता है। इस प्रकार उषा जी कहती हैं कि पुरुष चाहे उसकी बेटी हो या पत्नी किसी न किसी रूप में स्त्री को दबाने की कोशिश करता है। पुरुष का स्त्री के प्रति अपना दृष्टिकोण हमेशा पक्षपातपूर्ण होता है। आज परिवार में बदलाव आया है कि परस्पर प्रेम, विश्वास सब नष्ट होता है। स्वार्थ ही आज परिवार में मौजूद है।

'कथान्तर' (2004) उपन्यास में मणि, माला, शारधा और गंगा के माध्यम से परिवार का चित्रण किया गया है। ससुराल के घर में नौकरानी की तरह जर्निवाली। विधवा नारी के रूप मणि और गंगा का चित्रण हुआ है। माला को पिता और पति द्वारा शोषण के शिकार बनने वाली नारी के रूप में देखने को मिलता है। दुर्बल नारी के रूप में शारधा का भी चित्रण किया है। इन सब नारियों को पति, पिता और भाई से पीड़ित होना पड़ता है। परिवार में नारी की आवश्यकता जितनी होती है, नारी अपने बच्चों और पति केलिए कितने कुछ सहती हैं उसका खुला चित्रण है 'कथान्तर' उपन्यास। उपन्यास में उषा जी नारी को पारिवारिक बंधनों को निभाते हुए कार्यक्षेत्र में बढ़ाने के लिए प्रेरित करती है।

'अमावास की रात' (2007) उपन्यास में दो परिवार का चित्रण किया गया है। बच्चों के भविष्य ठीक करने के लिए अच्छा और बुरा करनेवाली मां उपन्यास में देखने को मिलता है। बच्चों की भलाई केलिए मन्नो के तांत्रिक परिवार गरिमा के परिवार को नुकसान पहुंचाने की कोशिश करता है। "क्यों कि यहां सभी व्यस्त हैं। किसी के पास हमारी हरकतों पर निगाह रखने की फुरसत नहीं है। थोड़ी मुश्किल तो है, पर यह घर हमारा सबसे अच्छा शिकार है"[5] दोनों परिवारों में मां अपने बच्चों के लिए सकारात्मक दृष्टिकोण रखती है। लेकिन दोनों परिवार में अन्तर यह है कि गरिमा अपनी मेहनत और मन्नो तांत्रिक विद्या से अपने-अपने परिवार को खुशियाँ देना चाहते हूँ।

'दीप अकेला' (2011) उपन्यास दिव्या और विनीता की कहानी है। उपन्यास में दिव्या और विनीता को विवाहित

और अविवाहित नारी के रूप में चित्रित किया है। दिव्या पी . एच . डी करने के साथ अपने बूढ़े , बीमार माता - पिता को भाई होकर भी अकेले संभालती है। 'दिव्या दीदी, अभी तक आपके दोनों में से एक भाई नहीं आते? फोन तो उसी दिन कर दिया था, जब आपसे नंबर लिये थे। पर दोनों जगह से एक ही बात कहीं गई थी कि इस वक्त एकाएक घर छोड़ना मुमकिन नहीं है। आने में उन्हें कुछ समय लगेगा।"[6] उपन्यास की दूसरी पात्र विनीता को पति ने घर में जुल्मों का शिकार होकर मौत की कगार पर पहुँचा दिया है । भाई उसे घर ले जाते हैं और विनीता की नई ज़िंदगी शुरु हो जाती है। उषा जी ती विनीता और दिव्या को उपन्यास में पारिवारिक अवरोधों को मुकाबला करने वाली नारी के रू प में चित्रित करती है।

'उसके हिस्से की धूप' (2018) उपन्यास का आरंभ एक मां की निस्सहायता पर होती है। वह ऐसी नारी है जो परिवार के प्रति प्रतिबद्ध होकर अपनी ज़िम्मेदारियों का निर्वाह करते दिखाई पड़ती है। सुनिता और हरिसिंह को छह बेटियां हैं। इसी के कारण बच्चों की पढ़ाई, भोजन जैसे ज़िम्मेदारी उठाने केलिए हरिसिंह तैयार नहीं होते हैं। इसलिए हरिसिंह छोटी उम्र में ही बच्चों की पढ़ाई समाप्त करके उसे घर में बैठाता है। अपनी छोटी बेटी को देवी बनाकर उसका बचपन छीनना चाहता है साथ ही हत्या करने की भी कोशिश करता है। लेकिन सुनिता अपनी बच्ची को बचाता है। हरिसिंह सुनिता को सिर्फ बच्चे पैदा करने वाले मशीन के रूप में देखता है। हरिसिंह को उपन्यास में बच्चों के अस्तित्व, शिक्षा और मनोरंजन छीनने वाले पिता के रूप में चित्रित किया गया है।

'सागर तट की वह सीप' (2019) उपन्यास में परिवार के आधार भूत बनकर खड़ी नारी का चित्रण किया है। ब्रजमोहन और उनकी मां मिलकर ब्रजमोहन की पहली पत्नी को काली होने के कारण हत्या करती है। दूसरी शादी अनुभा से करती है। शादी के बाद ब्रजमोहन के असलियत अनुभा को पता चलता है और उसे भी हत्या करने की कोशिश करता है। अनुभा व्रजमोहन को समझा कर उसे सही दिशा देती हैं। अनुभा की बहन कनुभा की स्थिति भी ससुराल में अच्छी नहीं थी। कनुभा के पति और भाभी के बीच अवैध संबंध है । अन्त में अनुभा मर जाती है। उपन्यास में उषा जी ने नारी को घर के कोने में बैठाने कोशिश करने वाले पतियों का खुला चित्रण किया गया है। स्त्री और पुरुष संबंधों के मध्य मानवीय स्वतंत्रता की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

'अंजुरी भर चांदनी ' (2020) नारी और पुरुष के अंतरंग संबंध को परिवार के संदर्भ में उकेरा गया है। गीता और सीमा बहनें हैं। सीमा को देखने आए नीलकंठ गीता को पसंद करके उनसे शादी करता है। बच्चा होने के बाद नीलकंठ उनकी बहन सीमा के बीच संबंध स्थापित करता है। सीमा अपनी बहन का घर और बच्चों को अपना बनाना? चाहती थी। "रोना चाहती थी वह, पर आंखों में आँसू थे कहाँ? नीलकंठ को झकझोर कर लड़ना चाहती थी वह, पर तीन - तीन बच्चों के चलते इसकी भी उसके लिए मोहलत थी कहाँ?"[7] गीता को घर से बाहर निकालने के लिए कोशिश भी करता है । गीता ने सब सहकर अपने परिवार में अपना जीवन जीने का? निर्णय लिया । इस उपन्यास में भारतीय पुरुष की मानसिकता का द्योतन करता है। आधुनिक युग में पुरुष दाम्पत्य संबंधों के प्रति उतना ईमानदार नज़र नहीं आता है जितना नारी। इसका स्पष्ट उदाहरण प्रस्तुत उपन्यास में नीलकंठ द्वारा उषा जी ने प्रस्तुत किया है।

'कितने धूमकेतु' (2020) कोरोना महामारी पर लिखा हुआ उपन्यास है। रामरतन की पत्नी पन्द्रह साल से पहले मर चुकी है। उनके दो बेटियों और एक बेटे की शादी हो चुकी है। रामरतन के बिना बच्चे अपनी ज़िंदगी जी रहे हैं। कोरोना के समय रामरतन को घर में अकेलापन महसूस करता है। उपन्यास में उषा जी ने बूढ़े आदमी को मानसिक संघर्ष का चित्रण किया है। रामरतन अपने बच्चों को पत्नी के बिना अच्छी तरह देखता रहा भी है? लेकिन उनके बुढ़ापे में बच्चे उसके पास नहीं है। पिता के कहने पर भी पिता के साथ रहने को तैयार नहीं होता है। आज परिवार में

परस्पर प्रेम और कर्तव्य पालन नहीं दिखाई देता है, सिर्फ स्वार्थ ही सर्वोपरि है।

'तारिणी' (2022) उपन्यास की प्रमुख पात्र शालिनी है। पहली शादी में उसे छह बेटियाँ हैं। इसलिए पति अपनी बेटियों को अनाथालय में सौंपता है क्योंकि वह बेटे को पसंद करती थी। लेकिन एक माँ केलिए बेटी हो या बेटा उसे कोई फर्क नहीं। इसी वजह से शालिनी घर से बाहर निकलकर अरविंद की सहायता से बच्चों को ढूंढ पाती है। बाद में अरविंद से शादी भी करता है। पहले सब ठीक था लेकिन जब शालिनी अपने बच्चों की पढ़ाई के बारे में कहते हैं तब से वह बदलने लगा। 'इतना छोटा - सा सच क्या वह जानती नहीं ? इन्ही सात बेटियों में उसके प्राण बसते हैं। पति अरविंद से यदि झगड़ती भी है, तो इन्हीं बच्चियों के भविष्य को सँवारने के लिए। जड़ाउ जेवरों की माँग को लेकर एक लफ्ज़ भी कभी मुँह से बोली है क्या?"[8] दो मानसिकता वाले पति के साथ रहने वाले शालिनी को बहुत मार्मिकता से चित्रण किया है। अन्त में अरविंद शालिनी की हत्या करके उसे कलंकित कहते हैं। अपनी बच्चियों की भलाई चाहने वाली माँ का दुखद अंत का दृश्य उपन्यास में दिखाई देता है। साथ ही उपन्यास में माँ के बिना रहनेवाली बच्चियों की ज़िदगी का मार्मिक दृश्य नज़र आता है।

'क्या नाम दूं तुझे ऐ जिदंगी' (2021) उपन्यास में एक मां की व्यथा का चित्रण किया गया है। औरत और मर्द के अन्तर्गत संबन्धों को परिवार के सन्दर्भ में जाना जा सकता है। गृहलक्ष्मी पति और दो बेटों के साथ खुशी से जीती थी। जब उनका बेटा हर्षित उर्वशी से शादी करते हैं तब से परिवार में तनाव आने लगा। उर्वशी हर्षित को अपने मां बाप से ले जाया गया । मां और बेटे के बीच द्वेष का भाव उत्पन्न होते हैं। "इस घर से रुपए - पैसे के ही नहीं, बाकी सारे संबंध भी खत्म करके जा रहे हो। मेरे और अपनी माँ के मरने की खबर यदि सुनो, तो भी कंधा देने के लिए यहां मत आना"[9] बाद में हर्षित बिजनेस में घाटा होने के कारण वह खुदकुशी करता है। सास और बहू की झगड़ा पारिवारिक विघटन का कारण बन जाता है। उपन्यास में परिवार की निरर्थकता का उद्घाटन भी नज़र आता है।

उषा यादव ने अपने उपन्यासों में विभिन्न परिवारिक समस्याओं को चित्रित किया है। उषा जी की दृष्टि में आज परिवार में बदलाव आ चुका है। प्राचीन काल के परिवार में आपसी प्रेम, त्याग, सहिष्णुता आदि भाव प्रत्येक के मन में बसा होता था। परिवार के सभी सदस्य एक दूसरे के सम्मान को अपना सम्मान समझते थे। आज परिवार में तनाव, आपसी क्लेश, मत भेद, ईर्ष्या आदि भाव उत्पन्न होने लगते हैं। उषा जी के उपन्यासों में परिवार की दुर्बलताओं, शिथिलताओं, सफलताओं को देखने को मिलता है। आज परिवार में क्षण - क्षण में आते परिवर्तन को अंकित करने के लिए उपन्यासकार उषा जी कटिबद्ध हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1 हिन्दु परिवार मीमांसा - हरिदत्त वेदालंकार पृष्ठ 1 सरस्वती सदन मसूरी 1963

2 एक और अहल्या - उषा यादव पृष्ठ 108 सुलभ प्रकाशन लखनउ 1991

3 आंखों का आकाश -उषा यादव पृष्ठ 97आत्माराम एंड सांस दिल्ली 1995

4 कितने नीलकंड - उषा यादव पृष्ठ 174 आत्माराम एंड सांस दिल्ली 1998

5 अमावास की रात - उषा यादव पृष्ठ 14 किताब घर दिल्ली 2007

6 दीप अकेला - उषा यादव पृष्ठ 119 साहित्य भंडार इलाहाबाद 2011

7 अंजुरी भर चाँदनी - उषा यादव पृष्ठ 87 नमन प्रकाशन दिल्ली 2020

8 तारिणी - उषा यादव पृष्ठ 9 अनन्य प्रकाशन दिल्ली 2022

9 क्या नाम दूं तुझे ए जिन्दगी - उषा यादव पृष्ठ 22 किताब घर प्रकाशन दिल्ली 2021

शोध निर्देशिका : **डॉ सुधा ए एस**

शोध छात्र

यूनिवर्सिटी कॉलेज , तिरुवनंतपुरम

स्त्री-मन, पितृसत्ता और पहचान का बहुस्तरीय विमर्श

डॉ अर्चना रानी

आमुख- गीतांजलि श्री हिंदी की प्रमुख रचनाकार हैं। वे अपनी कहानियों और उपन्यासों में स्त्री मन और देह की पीड़ाओं के पीछे सत्ता के तमाम रूपों की उपस्थिति को मूर्तन-अमूर्तन रूप में पाती हैं। घर-दरवाजे, जिसका भीतरी हिस्सा स्त्रियों की गतिशीलता के लिए जाना जाता है। किन्तु इस गतिशीलता के भीतर पितृसत्ता जड़-जमाए बैठी है। उनके उपन्यास 'माई', 'तिरोहित', 'हमारा शहर उस बरस', 'खाली जगह', 'रेत-समाधि' सब जगह यह मौजूद है, कहीं अपने परंपरागत स्वरूप तो कहीं अपने उदारमना स्वरूप में। वे अपनी रचनाओं में वस्तुजगत को पुरुष दृस्टिकोण से भिन्न रूप में देखती हैं। साथ ही भिन्न रूप में प्रस्तुत भी करती हैं। मैंने इस शोध-आलेख में इस भिन्नता को चिह्नित करने का प्रयास किया है।

बीज शब्द- पितृसत्तात्मक, थर्ड-जेंडर, कट्टरपंथ, सरहद, विमर्श, सार्वकालिक, पारिवारिक अंतर्संरचना, कौवी फ़ैमिनिस्टों, अर्धनारीश्वर, कट्टरपंथ, पुरातन ।

स्त्री-विमर्श पितृसत्तात्मक समाज को चिह्नित करते हुए अपनी समस्याओं का कारण इसमें देखता है और अपनी समस्याओं के निदान के लिए इसमें बदलाव की गुंजाइश तलाशता रहा है। पुरातन समय से ही समाज स्त्री को अपने संदर्भ में नियंत्रित करता रहा है और वह हर परिस्थिति में अपने वजूद और सम्मान को बचाए रखने के लिए संघर्षरत दिखती है। साहित्य अपने विविध रूपों में इन सभी मुद्दों को उठाता है और अपने पाठकों, श्रोताओं को सोचने-समझने के लिए नया दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।

गीतांजलि श्री का 'रेत समाधि' स्त्री-विमर्श पर विविध कोणों से विचार करता है। इसमें 'माँ' और 'बेटी' ये दो सार्वकालिक-सार्वदेशिक पात्र हैं। 'रेत समाधि' इन पात्रों के माध्यम से पितृसत्तात्मक समाज में स्त्री की समस्याओं, दशा, स्थिति एवं उनकी भूमिका पर विचार करता है। पितृसत्तात्मक समाज को इंगित करते हुए महादेवी वर्मा ने लिखा है, "समाज की दो आधार-शिलाएँ हैं, अर्थ का विभाजन और स्त्री-पुरुष को संबंध। इनमे से यदि एक भी स्थिति में विषमता उत्पन्न होने लगती है, तो समाज का सम्पूर्ण प्रासाद हिले बिना नहीं रह सकता।"[1] उपन्यास में माँ का 'पीठ' हो जाना, इस विषमता का ही परिणाम जान पड़ता है।

'रेत-समाधि' के तीन भाग हैं, पीठ, धूप और हद-सरहद। 'पीठ' में पारिवारिक अंतर्संरचना में पितृसत्तात्मक सीमाओं की पहचान और उन्हें लाँघ देने की खुशी छलछला उठी है। एक स्त्री का अन्य स्त्रियों के प्रति (बेटी या अन्य) रक्षात्मक, तो कभी इस पितृसत्ताक वर्चस्व को तोड़े बिना अपने ढंग से बेटी को पंख देता स्त्री-मन। 'माँ', जिसकी कोई पहचान नहीं है और एक 'बेटी' जिसने पितृसत्ताक समाज में अपनी पहचान बनाई है। एक मध्यमवर्गीय पारिवारिक कहानी जिसमें पति की मृत्यु के बाद बेटा-बहू घर के सर्वेसर्वा। बेटी, जिसे घर आने से रोका नहीं जा सकता और जिसके आने पर कोई खुश नहीं होता।

'धूप' में विमर्शों की गुनगुनाहट है। बेटी माँ को अपने साथ-अपने अपार्टमेंट ले आई है। माँ सजीव हो उठी है।

रोज़ी(थर्ड जेंडर) और माँ इस भाग के मुख्य किरदार हैं। आजादखयाल बेटी के पास रोज़ी को 'माँ' से सम्मानपूर्वक मिलने की आजादी है। इन तीनों के सखा भाव द्वारा थर्ड जेंडेर से जुड़े तमाम प्रश्नों पर सहानुभूतिपूर्वक विचार किया गया है। रोज़ी से रज़ा मास्टर बनकर अपनी पहचान छिपाना, सामाजिक-कानूनी उपेक्षा, वहीं कौवा प्रसंग के माध्यम दुनिया जहान के तमाम विमर्श कहकहा उठें हैं। सहज बातचीत के प्रतीक और बिम्ब विमर्श को गहरे अर्थ प्रदान करते हैं। "विज्ञान के नाम पर प्रदूषण फैलाने वाली तरक्की।"[2] पर्यावरण प्रेमियों की चिंताएँ, स्वच्छ भारत अभियान की निरर्थकता, "शरम का बाजार में अकाल है।"[3] बाजार के मूल्यहीन चरित्र को प्रस्तुत करता है। कौवी फ़ैमिनिस्टों की पितृसत्ता पर वैचारिकी "हम बदल गए हैं, पर वे नहीं, बेटे के रहते बेटी के पास माँ रहे, ये हार, तिरस्कार है।"[4] साड़ी प्रसंग में, पारिवारिक कलह, दुख और तनाव के छोटे-छोटे प्रसंग। साथ ही, लिव इन जैसे लुभावने प्रसंग भी।

उपन्यास भी सरहद, सीमाओं को पार करता है। सीमाओं के पार जाने का सुख और सीमाओं को लाँघने की छटपटाहट शुरू से अंत तक बनी रहती है। सीमाओं पर विचार करते-करते देह भी विमर्श का हिस्सा बन जाती है। "ललित कलाओं, लोक संस्कृति में एक अलग जिस्म है सीमाओं को पार करता। सीमा जहाँ पार होती वहीं संगम होता है। आदमी औरत एकमेक। बिरजू महाराज और कत्थक, जयशंकर और सुंदरी । शंकर और पार्वती। इनके मिलन जादू रचते हैं, अन्य बनकर, अन्य को अपना बनाकर। गाँधी औरताना पालथी में बैठ कर सीमा लाँघते हैं। लचछू चाचा रसोई लगा के सब दिल जीतते हैं।" नदियों के संगम पूजनीय हो जाते हैं, भारतीय समाज में आदि देव और पार्वती का मिलन सुंदर रूपक बनाता है। लेकिन आम व्यक्ति के लिए इन सभी रूपकों के गुढ़ार्थ तक पहुँचना संभव नहीं होता। वे उसके आराध्य तो होते हैं, किन्तु उसके व्यवहार का हिस्सा नहीं बन पाते।

गीतांजलि 'योनि और योगी' इन विपरीत शब्द-युग्मों के जरिए 'अर्धनारीश्वर' पर विचार करती हैं। हमारी सृष्टि, संस्कृति, धर्म के सम्मानीय कथा पात्र। 'लिंगम' प्रसंग से वे स्त्री-पुरूष के लिए एक-दूसरे की सार्थकता, मनुष्य जीवन के अर्थ 'संतति' और 'संतति की शिक्षा' योगी होते हुए भी गृहस्थ और पारिवारिक होते हुए भी घरेलू सीमाओं से बाहर, सबके दुख के साथी। भारतीय पौराणिक कथा मिथकों द्वारा भारतीय संस्कृति में 'स्त्री यौनिकता और लिंग' को भोग विलास की पाश्चात्य संस्कृति के बरक्स भारतीय मूल्यों के संदर्भ में देखने का प्रयास करती हैं। भारतीय पौराणिक कथाओं के मिथकों का विश्लेषण करते हुए डी. डी. कोसम्बी लिखते हैं, "मेरे विचार से अर्धनारीश्वर में दो देवताओं को इस तरह मिला दिया गया है कि दोनों के प्रति श्रद्धा प्रकट की जाए।"[6]

'रेत-समाधि' के रज़ा मास्टर और रोज़ी दोनों एक ही हैं। अपनी सामाजिक पहचान न होने का दंश, उसे रज़ा मास्टर बना देता है। "हमारी गिनती न मुस्लिम क्रिस्तान में, न यहूदी पारसी हिन्दू में न आदमी औरत में, हमारा नाम नहीं लेना, हमें पहचानना नहीं। हमें असल क्या, तसव्वुर से भी गायब रखना चाहते हैं,,,भूत भी पूजोगे, ,,,हम भूत नहीं छूत।

गीतांजलि पौराणिक अर्धनारीश्वर रूप, आधुनिक समय के स्त्री-पुरुष गुण रूपा के सम्मानीय समाज नायकों के

साथ रज़ा मास्टर और रोजी के द्वारा थर्ड जेंडेर के प्रति सामाजिक उपेक्षा, अपराधिक प्रवृति और बेगनेपन से जुड़े प्रश्नों पर विचार करती हैं। हमें बेहतर समाज निर्माण के लिए उदारमना होकर इन सभी विमर्शों पर विचार करना होगा।

बच्चों की सामाजिक सुरक्षा और दैहिक सुरक्षा से जुड़े मुद्दों को प्रस्तुत करती हैं, "ताकत का संचार, दानव का संचार। अपनी ताकत का स्वाद लेने वो बच्चों का स्वाद लेने लगा।" बच्चे, स्त्री, थर्ड जेन्डर सभी असुरक्षित। घर बाहर की सीमाएँ लाँघने के कारण बाहर दुख, तो कभी घर की सीमाओं में बँधे होने के कारण घरेलू हिंसा, अवसाद, तनाव, कलह के दुख। और ऐसे ही अनेकानेक प्रसंग "चोरी डेकेती दिसंबर 16 निठारी, लाल जेसिका हवाला हर्षद मेहता नीना तंदूर शोभराज चीट और जीनत अमान की पिटाई।" उपस्थित हो जाते हैं।

रोज़ी की हत्या के बाद माँ ने 'सीमापार' जाने की इच्छा करी। सबने सोचा, दैहिक सीमा से परे। मृत्यु की ओर। और माँ सीमा पार पहुँचती है, 'पाकिस्तान'।

तीसरा भाग 'हद-सरहद' में विभाजन के दंगों की विभीषिका का दंश झेलते स्त्री, बच्चे और पुरुष हैं। 'वाघा बॉर्डर' भारत-पाकिस्तान के बीच विभाजक द्वार। भारत-पाकिस्तान को एक-दूसरे से जोड़ता। भारत 1947 में अंग्रेजों की दासता से आजाद हो गया। किन्तु उसकी भौगोलिक सीमा, उसका स्वरूप काफी कुछ बदल गया था। भारत-पाकिस्तान। पर नक्शे पर खिंची रेखाओं ने दिलों पर भी खरोंचें दी। इन खरोंचों को साहित्यकारों ने अपने-अपने ढंग से प्रस्तुत किया है। "भीष्म साहनी। बलवंत सिंह। जोगिंदर प?ल। मंटो। रही मासूम रज़ा। शानी। इंतजार हुसैन। कृष्णा सोबती। खुशवंत सिंह। रमानंद सागर। मंजूर एहतेशाम। राजिंदर सिंह बेदी। इतने की गिनते रह जाओ।,, मोहन राकेश का गनी अपने मलबे पर बैठा है।"[7] इतिहास में मानव पलायन की विभीषिका। सीमा के इस पार या उस पार, जो कोई भी अपनी मिट्टी से उखडा। उसने कुछ खोया ही है। घर, परिवार, स्वजन, परिजन, अपनी मिट्टी, धन, संपत्ति, सम्मान। खोने की पीड़ा को कम या ज्यादा में नहीं मापा जा सकता। नई जगह फिर से जमने का, जगह बनाने का संघर्ष।

विभाजन के दंगों के वीभत्स दृश्य साकार होने लगते है। समय जैसे लौट आया हो। माँ की स्मृतियों का पाकिस्तान वर्तमान से भिन्न नाम और पहचान जीता हुआ। जिस कौतुक से मोहन राकेश के गनी मियां ने बदले अमृतसर को देखा और मलबा देख टूक-टूक हो गए। वैसे ही 'माँ' लाहौर को हैरानी से देख रही है। लेकिन अपनों को खो देने के दुख के बावजूद अपने घर-आँगन की दहलीज छू लेने का सुख, खोयों को फिर से पा लेने का ही सुख देता है। स्मृति की कारा से निकलकर ये सभी पात्र और उनके किस्से साकार होने लगते हैं।

यह यात्रा 'माँ' से जुड़े कुछ प्रसंगों को उजागर करती है। 'माँ' एक रहस्य जैसी है। जिसे उसके बच्चे नहीं जान पाए। "एक बोर्ड दिखा, जिस पर उर्दू में लिखा था यहाँ क्रिकेट का सामान मिलता है। माँ ने पढ़ा यहाँ क्रिकेट का सामान मिलता है और कुंडा खड़्का दिया।"[8] और बेटी के जेहन में प्रश्न उठा, 'कौन है ये औरत'। यह सिर्फ इस औरत की पहचान खोजना नहीं बल्कि अपने इतिहास, संस्कृति और संघर्ष की जड़ों को खोजना है। जिसको जाने

बिना स्वयं को बेहतर ढंग से समझा नहीं जा सकता। "जो यहाँ से चली गई, मैं थी वो।" अर्थात बीते समय(रेत) की कहानी में सोई(समाधि), खोई, दबी। जिसकी रेत (उपरी परत) हटते ही, वह(माँ) अपने पूरे वजूद के साथ प्रकट हो गई।

औपनिवेशिक भारत में चन्दा और अनवर का विवाह होना, हिन्दू-मुस्लिम विवाह की सामाजिक और कानूनी मान्यता भारतीय संस्कृति के उदारमना स्वरूप की द्योतक है। विभाजन के दंगों में बलवाइयों ने स्त्री, पुरुष, बच्चों के साथ क्रूरतापूर्वक व्यवहार किया, वह मानव समाज के लिए अशोभनीय था। धार्मिक उन्मादियों को सांकेतिक रूप से चिह्नित करती स्त्रियों के साथ हुए अपमान जनक व्यवहार के दृश्य "पट्टा बाँधे मर्द। उसे दबोचा, खींचा, ... वो जैसे बोरी, नकाबपोश पट्टाधारी उसे घसीटता हुआ।" "घर लपटों के पीछे। काले साये आग में नाचते। बाहर कूदते। कोई निकला। उठा के वापिस झोंक दिया। तंदूर में आलू।"[10]

इन आत्ताईयों के लिए स्त्री देह 'भोग की वस्तु', 'मुनाफे की वस्तु'। वह समय जब मानवीय संवेदनाएँ मारकर व्यक्तिका पशुत्व चरम पर था और वही समय जब इस भयानक समय में भी मानवता के बेमिशाल उदाहरण मिले। "एक पट्टेवाला उसकी तरफ़ आया। पट्टा नहीं था। गुमड था। चेहरा नहीं याद। उसके हाथ में मूर्ति। मेरी। ...लो बाजी। लोग पागल हो गए हैं। अभी भाग जाओ। फिर लौट आना। जल्दी। अपने घर।"[11] विभाजन के दंगों के लिए किसी एक कौम को दोष नहीं दिया। आततायी और मददगार एक ही कौम से हों, तो किसी को दोष कैसे दें। थार को पार करना। शारीरिक, मानसिक कष्टों से गुजरते हुए विभाजन के बाद नई शुरुआत करना आसान नहीं रहा होगा। लेकिन नई पीढ़ी को इन कष्टों का, माँ के संघर्षों का अंदेशा भी नहीं है।

लेखिका कट्टरपंथ और शासन के गठजोड़, सत्ता और ताकत की बेरहमियाँ उजागर करती है, "कट्टरपंथ और शासनतंत्र को समाधियाँ रास नहीं आतीं।" कानून जमीन के टुकड़ों के लिए बने। पर माँ, अपने घर को अपना कैसे ना कहे। यह विभाजन पूर्ण रूप मन, आत्मा को विभाजित नहीं कर सका। अपने घरों, अपने परिजनों, परिचितों के लिए सुख और प्रेम की कामना बनी रही। खो देने की पीड़ा में भी बचे रहने का सुख महत्वपूर्ण हो उठा है। इस बचे हुए (प्रेम, अपनापन) अविभाज्य में ही सत्ता और धर्मतंत्र की हार है। 'गनी मियां"[12] की तरह ही दोनों शक के घेरे में हैं। "आजकल मासूम दिखती लड़कियाँ बच्चियाँ और बुढ़ियाँ ही मुखबरी और दहशतगर्दी को अंजाम देती हैं।"

उपन्यासकार ने विभाजन के दंगों, कत्ल, लूटमार के लिए किसी एक कौम को दोष नहीं दिया। आततायी और मददगार दोनों ही पक्षों में हैं, तो किसी दोषी ठहराएँ। ऐसे संकटपूर्ण समय में वह "बुद्ध को माथे लगाती। मौत का सन्नाटा लगता तो बुद्ध को नमन करती।"[13]

'बुद्ध', एक विचार जोकि हर विपरीत परिस्थिति में शांति और धैर्य का भरोसा देता है। जिस पर भरोसा कर 'माँ' 'खैबर पास' पार हो 'नई शुरु आत' करती है। वर्तमान में, दुनिया के स्तर पर पलायन, शरणार्थी, प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जे के लिए हिंसा, भाषाई-सांस्कृतिक वर्चस्व के लिए झगड़े, देशों के मध्य युद्ध, श्रेष्ठता के नित-नए मानदंड, असमानता, भेदभाव और उन्नत तकनीकी विकास के माध्यम से गुलामी का अलग स्वरूप सामने आया है। ऐसे

में, यह विश्व एक नई शुरुआत के लिए बुद्ध भूमि(भारत) की ही और देखता है। अपनी समस्याओं के समाधान हमारी भूमि में समाहित हैं। हमें कहीं और देखने की नहीं बल्कि निरपेक्ष भाव से आत्मलोकन करने की आवश्यकता है। 'माँ' ने पाकिस्तानी सिपाहियों से पूछा, "मेरी मूर्ति कहाँ है?" "उसकी परख हो रही है। जो जहाँ की है वहीं रहेगी। मैं भी बहुत पुरानी हूँ। जहाँ की हूँ वहीं रहूँगी। लड़कों, वो कैलाशनिकोवधारियों से बोली, एक नेलकटर मँगवा दो।"

गीतांजलि इतनी अमूर्तता में बात करती हैं कि घटनाओं और विचारों के गड़मड़ से विचारों को अलगाना कठिन प्रतीत होता है। व्यक्तिके भीतर बचे जंगलीपन को कतरने के सूचक 'नेलकटर' की आवश्यकता हमेशा बनी रहती है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी व्यक्ति के नियमहीनता, आक्रामक, दंभी स्वरूप को प्रकृति और मानव सभ्यता, संस्कृति के लिए खतरे के रूप में देखते हैं। यदि बचे रहना है तो इस पर नियंत्रण आवश्यक हो जाता है। महादेवी वर्मा लिखती हैं, "मनुष्य जाति का, बर्बरता की स्थिति से निकल कर मानवीय गुणों तथा कला-कौशल की वृद्धि करते हुए सभ्य और सुसंस्कृत होते जाना ही उसका विकास है।"[14] लेकिन "मनुष्य की पशुता को जितनी बार भी काट दो, वह मरना नहीं जानती।"[15]

बेटी माँ के नित नए रूप को देखकर हैरान है, "कौन है ये औरत? मैं इसे नहीं जानती? माँ-बेटी रेत-समाधि के मुख्य पात्र हैं। 'पीठ' में माँ कैदी और 'बेटी' आज़ाद नजर आती है। माँ 'बेबस' और बेटी पितृसत्ता की पकड़ से छूटती 'वश हीन' नजर आती है वहीं अंतिम भाग में माँ 'आजाद ख्याल, निडर, जीवट, दुखों से न झुकने वाले किरदार के रूप में दिखाई देती है, जो अपने भीतर इतिहास, रहस्य और नई सोच(बेटी की परवरिश) को पंख देती है, वहीं 'बेटी' एक सुरक्षित घेरे से बाहर निकलते ही डरी, कैदी और अपने निजी जीवन को संकट में देख चिंतातुर दिखाई देती है। यह फ़ैमिनिज़्म अपनी जड़ों से टूटा हुआ, घबराया, बाजार के स्वर्णिम सपनों के छिन जाने से व्याकुल (केके से दूर होने का भय)

'माँ' सारी बाधाओं को पीछे छोड़ती अपने पति, प्रेम कोमाग्रस्त 'अनवर' से मिलती है। उसका हाथ थामती है। हिन्दू-मुस्लिम प्रेम कहानी में भारत की हिन्दू-मुस्लिम तहज़ीब, संस्कारों और प्रेम को भी सूचित करती है। लेखिका के शब्दों में, सरहद क्षितिज। जहाँ दो है। ,,, तुमनें सरहद को नफरत का बाइस बना दिया।"[16]

माँ बेटी के माध्यम से स्त्री विमर्श बतियाने लगता है, "भूलना मर जाना है। मैं मरी नहीं हूँ। मैं रेत में अपने पीछे सब दबा आई थी। आज उसी रेत पर फिर आ गई हूँ।"आपकी ये रेत यादें हमें मौत के मुहँ में ले आई हैं।'

माँ ने अनवर का हाथ थामा। "तुम नहीं आये, माँ ने कहा, तुम्हें माफ़ किया। मैं नहीं आई, तुम मुझे माफ़ कर दो। और अनवर का हाथ उठा था और उनके होंठों से हल्के से आया-माफ़ी।"[17] और सरहदें लांघने की सजा ट्रिगर से निकली एक गोली और माँ की मौत माँ को खोने के बाद खुद को खोया महसूस करती बेटी। हमारे दुख और सुख सरहद से परे साझे हैं। फिर भले ही वह विभाजन भौगोलिक हो या बीते समय की स्त्री या वर्तमान स्त्री का हो। दोनों के सम्मुख अपने समय की समस्याएँ और चुनौतियाँ हैं। किसी एक के भी संघर्ष को कम करके नहीं

आँका जा सकता। दोनों एक-दूसरे की संबल और उर्जा का स्रोत हैं। पुरानी पीढ़ी में माफ़ करने की उदारता और माफ़ी मांगने का निष्कपट हृदय था। किन्तु वर्तमान पीढ़ी तकनीकी विकास की सीढ़ियाँ चढ़ती, अपने अहं में, पुरातन से छिटकी अलग-थलग कमजोर है। उसे साहित्य की, प्रेम की ताकत को समझना चाहिए क्योंकि मानवीय सम्वेदनाओं के झरने इसी राह में फूटते हैं।

निष्कर्ष- 'रेत-समाधि' में दो स्त्रियों का, दो पीढ़ियों का संघर्ष है। 'एक' जो खुद को बिसरा बैठी है। 'दूसरी' जो 'पहली' से अनजान है। 'बेटी' जिसके द्वारा हम आधुनिक समय और समाज को, बदलाव के चिह्नों को, बाजार के बढ़ते कदम और स्त्री जीवन पर उसके प्रभाव देख पाते हैं वहीं अंतिम भाग 'हद-सरहद' विभाजन से पूर्व दंगों में अपना सर्वस्व खो चुकी 'माँ' की गाथा है। दोनों एक-दूसरे को सपोर्ट करती, दोनों एक-दूसरे को पंख देती। प्यार करती। अपनेपन, स्त्री-बहनापे से सरोबोर। बावजूद इसके बेटी(अधुनातन स्त्री विमर्श) अपनी माँ (पुरातन स्त्री-विमर्श) के संघर्ष और पीड़ा से बेखबर नजर आती है। नई पीढ़ी (स्त्री विमर्श) को लगता है, सिर्फ़ वही अपने समाज और सत्ता से टकराने का साहस रखती है। 'रेत-समाधि' इस भ्रम को तोड़ता है। यहाँ स्त्री-विमर्श की वैचारिकी और विभाजन की विभीषिका के दंश को एक साथ जोड़कर देखा गया है। जिंदगी के मायने बदलाव को स्वीकार कर पुनः नई पहचान बनाना है। समाज अपने इतिहास से बेखबर होकर अपना पूर्ण मूल्यांकन नहीं कर सकता। स्त्री को भी बिना भटकाव अपने इतिहास को जानते हुए समयानुसार बदलावों को स्वीकारना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. शृंखला की कड़ियाँ, महादेवी वर्मा, पृ-171, साधना-सदन, प्रयाग, तृतीय संस्करण।
2. रेत समाधि, गीतांजलि श्री, पृ-181, राजकमल प्रकाशन, संस्करण-2018,
3. वही पृ-183 राजकमल प्रकाशन, संस्करण-2018,
4. वही पृ-185 राजकमल प्रकाशन, संस्करण-2018,
5. वही पृ-207 राजकमल प्रकाशन, संस्करण-2018,
6. मिथक और यथार्थ, डी डी कोसम्बी, पृ-13, ग्रंथशिल्पी, संस्करण-2001
7. रेत समाधि, पृ-267 राजकमल प्रकाशन, संस्करण-2018,
8. वही पृ-288 राजकमल प्रकाशन,
9. वही पृ- 291, राजकमल प्रकाशन,
10. वही पृ-299, राजकमल प्रकाशन।
11. वही पृ-305 राजकमल प्रकाशन।
12. मलबे का मालिक, मोहन राकेश,
13. रेत समाधि, गीतांजलि श्री, पृ-302 राजकमल प्रकाशन,
14. शृंखला की कड़ियाँ, महादेवी वर्मा, निबंध संग्रह, पृ-167, साधना-सदन, प्रयाग, तृतीय संस्करण
15. नाखून क्यूँ बढ़ते हैं, निबंध, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी,
16. रेत समाधि, गीतांजलि श्री, पृ-322, राजकमल प्रकाशन।
17. वही पृ-355, राजकमल प्रकाशन।

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

अस्मिताई संकट - चयनित हिंदी कहानियों के संदर्भ में

डॉ सौम्या सी एस

गीतांजली श्री की कहानी है 'बेलपत्र'। बेलपत्र फातिमा और ओम की कहानी है। फातिमा और ओम ने मजहब को दरकिनार करते हुए शादी की। समाज और मजहब की दूरियों को दोनों ने मिलकर दूर किया। शहर-भर में उनके संबन्ध को लेकर हंगामा फैला। ओम के परिवार के धार्मिक माहौल में फातिमा अपनी अस्मिता की खोज करने लगती है। अपने कॉलेज के ज़माने में धर्म और मज़हब की खिलाफत करनेवाली फातिमा को ओम के परिवार के कट्टर धार्मिक वातावरण में असुरक्षा का एहसास हुआ।

अपनी असुरक्षा अन्यताबोध के रहते वह धार्मिक प्रतीकों और रिवाज़ों को अपनाने लगती है। नमाज अदा करना, रोज़ा रखना फातिमा को सुरक्षा देती है। अस्मिता की असुरक्षा फातिमा पर इस कद्र हावी होती है कि उसे ओम के धर्म से परहेज होने लगा। फातिमा को लगता है कि सारा दर्द, सारी कुंठा उसने अब इसी एक बिन्दु पर न्यौछावर करने की कसम खा ली थी अपनी एक पहचान पर क्योंकि उसे लगा गया था कि कोई उसे पहचानता नहीं, मानता नहीं है। उसे अपनी अस्मिता की खोज हो आई। फातिमा ने अपने भाई की शादी में शरीक नहीं हो पाई क्योंकि ओम का मजहब बीच में आ गया। फातिमा कहती है "तुम्हारे हिन्दुत्व की वजह से मैं शादी में शरीक नहीं हो पाई।" (बेलपत्र, पृ. 26)

असुरक्षा और अस्मिताई संकट इतने बढ़ने लगे कि हिन्दु और मुसलमान की पहचान उभरने लगी। अली मंजिल दयाल कृष्ण की कहानी है जो मंजूर अली का घर खरीदकर अपने आप को उस घर में ढूँढने का प्रयास करते हैं। उस घर का नाम 'अलि मंजिल' था। दयाल को यह नाम खटकता है तो वह उस नाम को बदलकर 'दयाल भवन' कर देते हैं। फिर भी दयाल के मन में 'अली मंजिल' नाम और उसके पहले मालिकों की याद एक गाँठ सी फँसी पडती है।

मुहल्लेवाले, दूधवाले, डाकिया दयाल भवन को 'अली मंजिल' ही मानते थे। दयाल अपनी पहचान को बनाने की कोशिश में लगता है। वह दयाल भवन को स्थापित करना चाहता है पर अली मंजिल समाज से छुटवा भी नहीं है। दयाल की घुटन बढने लगती है। वह अस्मिताई संघर्ष में फँसता है। घर के मुसलमानी नक्शे और प्रतीकों को देखकर दयाल को नफ़रत होने लगती है। अलमारी के दोनों बाजू के गुम्बदी शक्लें उसे मस्जिद दयाल अपने हाथों से धूप जलाकर पूजा घर को सुवासित करता है। तब दयाल को तस्सली होती है, उसे यह घर अपना लगने लगता है। इस अपनापे में दयाल का दुख तिरोहित हो गया। वह खुद मन ही मन दयाल भवन दुहराता और आत्मसुख पाता। उसको लगने लगता की इस घर की पहचान में से अली मंजिल मिट जाएगा। एक दिन मंजूर अली दयाल की खैरियत पूँछकर खत लिखते हैं। खत में मंजूर अली अपने पुश्तैनी मकान से उनके और उनकी अम्माजान के लगाव का ज़िक्र करते है। खत के एक लफ्ज़ ने दयाल के दिमाग में कौध सी मचा दी। मंजूर अली की अम्मा ने बाहरी दरवाजें पर बुरी बताए टालने के लिए आयतल कुर्सी टाँग रखी थी। दयाल को ताज्जुब हुआ कि उनकी नज़र कभी इसपर नहीं पड़ी। दयाल ने तैश में आकर जुज़दान को नोचने के लिए हाथ बढाया। दयाल एक गहरे सन्नाटे में फँस गया और दरवाज़े के बीचोंबीच जड़ होकर रह गया। दयाल की धार्मिक असहिष्णुता ने उसे सांप्रदायिकवादी में तब्दील कर

दिया। उसको अपने धार्मिक चिह्नों की स्थापना से भी खुशी नहीं मिली, वह मंजूर अली के पुश्तों की निशानियों को भी मिटाकर एक फासीवादी बन रहा था।

आज़ादी के बाद के भारत में और धर्म के नाम पर बना, अपने से चौबीस घंटे बडे देश के पडोसी बने। इस सच्चाई के बावजूद हमारा समाज भी सांप्रदायिक बना। ज़ाहिर है कि इसका सबूत यह है कि इन परेशानियों से हमारा संवेदनात्मक रिश्ता नहीं बना। यह दुविधा साहित्यकारों ने अभिव्यक्त किया।

लिबासों के तब्दीली, व्यक्ति निर्माण में सामाजिक भूमिका का प्रत्यक्षीकरण है। रहन-सहन, आचार-विचार और आदतों को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संचालित किया जाता है। व्यक्ति की स्वतन्त्रता पर यह सामुदायिक अभिव्यक्तियाँ भापा, नस्ल जाति और धर्म के साथ किसी भी रूप में हो सकते हैं। सामुदायिक अभिव्यक्तियों के मूल में अस्मिता होती है। धर्म, जाति, नस्ल और भाषाई वर्चस्व सामुदायिक अभिव्यक्तियाँ होती है सांस्कृतिक नहीं। सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के पीछे उन्नत जीवन के साथ ही मनुष्य के अविराम संघर्ष का इतिहास है। सामुदायिक स्तर पर पहले पहले अस्मिताबोध और दूसरे स्तर पर डर बन जाता है। यह सामुदायिक अभिव्यक्तियाँ डर का माहौल पैदा करती है।

नीलाक्षी सिंह के 'परिंदे का इंतज़ार' सा कुछ 'नसरीन अख्तर उर्फ नसर' की कहानी है। नसर के जीवन में धार्मिकता का कोई स्थान नहीं है। वह और उसकी अम्मी मरहूम अब्बा की गैर हाज़िरी में अपने सलीके से जीवन गुज़र कर रहे थे। नसर को कोई लड़की समझकर मदद करना उसे मंजूर नहीं था। वह स्वयं आश्रित जीवन पसंद करती थी। दंगाई माहौल में नसर और अम्मी को अपना घर छोड़कर जाना पडा। उन्हें शरणार्थ बनना पड गया। नसर को यह पता था कि इस कद्र परेशानियों का कारण मज़हब है।

दंगाग्रस्त समय में अपना घर उन्हें महसूस नहीं लगा क्योंकि वे उस इलाके में अकेले थे। उनके हम मज़हब अपना घर बेचकर पहले ही सुरक्षित बच निकले और 'अपने' लोगों के बीच महफूज़ हो गए। नसर को पहचान का धार्मिक आधार मंजूर नहीं था। वह न तो एक लड़की की तरह सहम कर जीना चाहती थी और न ही मज़हब के नाम पर जीना पसंद था। वह इनसान बनकर जीना चाहती थी और उसका लिंग और मज़हब कमतर अस्मिताएँ है। वह खौफ - जो नसर की इनसान की तरह जीने नहीं देता, उसे हमेशा औरत और मुसलमान बनने की कोशिश करता है, नसर उसके खिलाफ थी। दंगों की दहशत और मज़हब का रंग नसर को महसूस कराता है कि वह नसरीन अख्तर है और मुसलमानियत उसकी पहचान है। हिन्दु बहुसंख्यक इलाके में अपने पराएपन से बचने के लिए नसर मजहब अस्मिता को अपनाने में मजबूर होती है। नसर को देखकर इलाकेवाले नसर के मुसलमान होने का इशारा देते रहते। यह परायापन अकेलेपन और अस्मिता की तलाश में बदल गई। नसर को अन्दाज़ा होने लगा कि इस इलाके में उसके सिवा मुसलमान और कोई नहीं था। नसर का धार्मिक विरोध दंगे के माहौल में धार्मिक अस्मिता को मानने में तबदील हो गया। उसे अपने कौम, नस्ल, समुदाय के बीच सुरक्षित भावना मिली। नसर को सही लगा कि अपनी नस्ल का खून पहचानकर एक जुट होकर ही अपनापन मिलता है। इकट्टा रहने में संबलता का एहसास नसर को सही लगने लगा।

अस्मिता का मुद्दा सामाजिक, राजनीतिक और इनसानी तौर पर ज़ाहिर होता है। अस्मिता में दरारें लोगों को अजनबी लोगों के बीच अजनबी बना देते हैं। अपनी सांस्कृतिक, भौगोलिक सीमाओं से कटकर व्यक्ति संत्रास, पराएपन, अलगाव, असुरक्षा का एहसास करता है। इसलिए विभाजन और दंगाई जुल्मों के शिकार लोग अन्यताबोध का दुख झेलते हैं।

सहायक आचार्या, हिंदी विभाग
एस एन कॉलेज, आलत्तूर, पालक्काडु जिला

मानस कैलास

अनुवाद : प्रो. डी. तंकप्पन नायर

मूल : मंजु वेल्लायणि

अनुवाद : डॉ.रंजीत रविशैलम

(पूर्व प्रकाशित से आगे)

कैलास के उत्तर के शृंग के सामने हिरण्यशृंग नामक बडा पर्वत है। उसकी तराई पर पोनतरिमणली नामक सुदंर सरोवर। वही है गंगा को भूमी पर ले जाने हेतु तपस्या करते भगीरथ का बिंदुसरोवर। गंगा का प्रभवस्थान। मंदाकिनी सोमपाद से निकलकर सात दिशाओं में बहती है। माना जाता है कि रत्न यान एवं सोने के विमान वहाँ है। ये सब ईश्वर के नक्शे के स्वर्गीय दृश्य हो सकते हैं। केवल महायोगी एवं सिद्ध से उनके दृश्य साध्य है। आपके द्वारा भक्तिपूर्वक प्रदान करते प्राभृत के अंत में दिव्यज्योति होकर हिमशृंग में विलीन हो जाता है। माना जाता है कि आदिशंकर केदारनाथ से ज्योति स्वरूप हो हिमालय शृंगों में वापस आये थे। वेल्लायणि शिवोदय मंदिर के स्वयंभूलिंग का पता करनेवाले गोविंदशर्मा नामक योगी भी हिमालय में तप करने जा रहे थे। आप भी हिम तेज होकर उसमें विलीन हो गए होंगे।

चाँदनी में डूबे खडे कैलास एवं नीले आसमान को देखते हुए खडे रहने पर पहरों के निकलने तक का अहसास नहीं होता। सुबह होने तक ही नहीं, दिन रात बीतने पर भी देखते रहेंगे। क्योंकि समय और काल ठंडी हवा बनकर पुचकारते जाएँगे। यम व राम की चर्या करते ऋषिवर्य अपने अंदर के प्राणदीप कैलास को समर्पित कर निर्विकल्प समाधि की ओर संचरण इस तरह ही करते होंगे। हमारे जैसे केवल मर्त्यजन्म लेने वालों के लिए वे सब अतिचाह थे। शायद द्रोणपुत्री चंद्रकला को छूना चाहती हो।

पूर्ण संतृप्ति से सत्वर्णी रात के दृश्य खींचकर बिजु और षाजु के आने पर ओले की तरह हिमपात हुए रास्ते से हम तंबू की ओर वापस चले। अंजली बद्ध हाथों व मन में कैलास को लपेटकर हम सोने के लिए लेटे।

।।

देशपुक से सुत्तुलपुक के लिए बाईस किलोमीटर चलना होगा। उन्नीस हज़ार फीट लंबा डोलमापथ पार करके ही वहाँ पहुँच सकता है। कैलास के पास तक जाना, इसका स्पर्श करना आदि बताना अयथार्थ है।

तिरुवण्णामलै भी कैलास के समान शिवलिंग के रूप में माने जाते हैं। तिरुवण्णामलै की प्रदक्षिणा करने के लिए 16 किलोमीटर ही चलना होगा। कैलास परिक्रमा तो 52 (किलोमीटर की होती है)। कैलास जैसे खतरनाक प्रांतों के जैसा नहीं है तिरुवण्णामलै परिक्रमा। प्राणवायु की कमी नहीं है। ज़्यादा सर्दी भी नहीं है। हिमाच्छादित पर्वतमाला नहीं है। कैलास कमलकली के समान है। चहुँ ओर के पर्वत पंखुडियाँ के समान उसे अनदेखा कर देते हैं। कैलास परिक्रमा वास्तव में उसकी बाधा बन खडे पर्वतों के पार्श्व से होती है। कहीं कहीं पहुँचने पर कैलास को एकदम सुष्ठु देख सकता है। कहीं कहीं दर्शन बाधित होते हैं।

सुबह शेरपाओं ने एक गिलास चाय दी थी, उसे पीकर ऊर्जावान महसूस करता हूँ। तंबू के बाहर के पत्थरों में हिम शिला बन पडा है। नदी के भिन्न भिन्न भाग में बर्फ के टुकडे दूध टिकिये के समान नज़र आते हैं। उसके निचले भाग में हल्का -सा नीला रंग, यात्री सब उत्साहित हैं। पिछले दिन की आशंका और थकावट हट चुकी है। वटक्कुम नाथ की सन्निधि से सटे तंबु में एक रात बिताने की धन्यता एवं ऊर्जा चेहरे के विभिन्न भावों में है।

शुरू के डेढ किलोमीटर तक एकदम मैदानी प्रांत है। लंबे होते रास्ते। बातचीत करके कोई भी ऊर्जा नष्ट न करें -ऐसा निर्देश विशेष रूप से डारजी ने दिया था। उसका अनुसरण कर अधिकर तो मौनव्रत में मग्न है। विभिन्न स्थानों से आनेवाले आमतौर पर रास्ते से बडे ही ध्यानपूर्वक चल रहे है। केवल घोडे व याँक की आवाज़ें ही रास्ते में गूँज रही हैं। रास्ता सिधु तट से ही है। माना जाता है कि आकाशगंगा की एक शाखा है सिंधु। सुबह-शाम इस नदी का स्मरण करना पुण्यप्रद है। एक बार श्री पार्वती ने स्त्रीधर्म के बारे में वर्णन किया था। उसे सुनने के लिए पृथ्वी की सारी नदियाँ मौजूद हूई थीं। इस दौरान उमा ने सिंधु नदी का विशेष उल्लेख किया था। वनपर्व में बताया गया है कि एक दफा मार्कण्डेय मुनि ने बाल कन्हे के पैर में सिंधु नदी के दर्शन किए थे। कैलास की भूमि से यात्रा करते वक्त घर-गाँव भूल जाते है। आय-व्याय भूल जाते हैं। दम घुटती बातों का दवाब नहीं। देवभूमि में खर्च नहीं है। आय ही आय है। नज़र आते सारे अनुपम दृश्य आये हैं। वह मन में बढता जा रहा है।

पार्वती परिणय देखने आने के बाद वापस जाने के बारे में भूल जानेवाले देवगण ही है क्या ये हिमाच्छादित गिरिश्रृंग? अध्यात्म रामायण में बालकाण्ड-सी तराई से नज़रा आते कैलास का नज़रा कितना सुदंर है। पृथ्वी का आसमान तक नमन करती एषुत्तच्छन की भावना। कैलास पर्वत के सूर्यकोटि शोभित विमलालय के रत्नपीठ में ध्यानरत है विश्वेश्वर। उनके बाएँ गोद में विराजमान हैमवति की कथाश्रवण तृष्णा के लिए तीर्थ के जैसा ही तुँचन ने उमामहेश्वर संवाद का प्रस्तुतीकरण किया है।

बडी ललिता सहस्रनाम लाल शोभारत सायाह्नों में दीप के सामने आसन में बैठकर बिना मतलब समझे, मांगी गई मन्नतें, कथन के समय में भी कैलास अपने गर्व के साथ खडा है - महाकैलासनिलया मृणाल मृदुदोर्लता/ महनीयदा मूर्तिर्म हासमाज्य शालिनी/ आत्मविद्या महा विद्या श्रीविद्या कालसेविता /बडी षोटशाक्षरी विद्या त्रिकूटकामकोटिक।

ज्वर बाधित होने के पश्चात कैलास यात्रा बीच में त्यागने वाले तपोवन स्वामी जब बदरीकाश्रम में अलकनंदा के तट पट एक एकांत कुरीर में रहते वक्त एक संघ संन्यासीगण कैलास यात्रा के लिए निमंत्रण देता है। अतीव सुकृत के परिपक्व दिशा में ही कैलास दर्शन साध्य होता है। 'हिमगिरिविहार' में आप इस प्रकार बताते हैं। शारीरिक पीडाएँ अधिक होने व वस्त्राति की कमी के कारण पहले आपने थोडा-सा हिचका। स्वामी की सोच यही थी कि इस तरह की यात्राओं के लिए स्वेच्छा से उपरि ईश्वर का निर्णय ही मुख्य है। तभी निकलो पुनः कैलास के लिए रवाना हो जाओ। दुबारा जाकर कैलास के दर्शन करो-उन्हें ऐसा लगा की ईश्वर की आज्ञा है यह। बदरी में अलकनंदा नदी में सरस्वती आकर मिलते सरस्वती तट से स्वामी संघ के साथ कैलास की ओर गये थे। बीच रास्ते में कुछ लोग डरकर लौट आने की कोशिश की, मगर हिम पर शरीर गिरकर नाश होना भी एक तरह का मंगलदायक है। उसपर धीरज खोने की क्या बात है। ऐसे पूछने पर वे लोग यात्रा - ज़ारी रखने का ठोस निर्णय ले रहे थे।

(क्रमशः)

आत्मकथा

देवयानम्

अनुवाद : प्रो. के.एन.ओमना

मूल : डॉ.वी.एस. शर्मा

सत्रहवाँ देवपद - घरेलू जीवन

(पूर्वप्रकाशित से आगे)

मेरी इच्छा मानकर ही भाई ने हमारे नए मकान का नाम 'निवेदिता' रखा था। उस समय मैं भगिनी निवेदिता की ज़िंदगी की रचना कर रहा था। श्री विवेकानंद स्वामी की आदर्शनिष्ठ शिष्या थीं वे। इसीलिए उन्हीं की याद में हमारे घर का यह नाम रखा गया था। श्री रंगनाथानंद स्वामी ने मेरी उस पुस्तक की भूमिका लिखी थी तथा तृश्शूर के श्रीरामकृष्ण आश्रम की ओर से उसका प्रकाशन हो गया था - यह बात आनुषंगिक रूप से अब मैं कहना चाहता हूँ।

अपनी बहिन की तीसरी बेटी मिनी (यामिनी) अपनी उच्च शिक्षा के लिए यहाँ के कॉलेज में भर्ती हो गई थी तो वह भी हमारे साथ ही रहती थी। उसने भौतिक शास्त्र में स्नातकोत्तर परीक्षा पास होने पर अंतरीक्ष विज्ञान में (space science) अपनी पीएच डी भी की थी। अपनी बहिन का प्रथम पुत्र डॉ इंदुलाल कोयम्पत्तूर (तमिल नाडु) आयुर्वेद आर्यवैद्य फारमसी में काम करता है। उसकी शादी हुई है मेरे भाई की बेटी अपर्णा के साथ। बहिन का दूसरा बेटा है डॉ सूरज लाल जो कनडा के ससकटून विश्वविद्यालय में काम करता है।

अपनी बहिन की बेटियाँ शालिनी एवं मालिनी स्कूलों में पढ़ाती है और अपना-अपना पारिवारिक जीवन बिताती है। तीसरी बेटी यामिनी दिल्ली में काम करती है और वहाँ अपने परिवार के साथ रहती है। शालिनी, मालिनी और यामिनी की छोटी बहिन रंजिनी यहाँ राजधानी में केलट्रोण में अध्यापिका है। अपने परिवार के साथ वह हमारे निकट ही रहती है।

केरल की इस राजधानी में हमारे बहुत से बंधु-बांधव रहते हैं। वे लोग यहाँ की किसी न किसी संस्था में अपनी नौकरी करते हैं और अपने परिवार के साथ यहाँ आए हैं। उनके साथ मेरा स्नेह एवं सौहद है।

यहाँ क्षत्रिय क्षेम-सभा, पुष्पक सेवा समिति, योगक्षेम सभा आदि जितने सामाजिक संगठन हैं उनके अंगों तथा कर्मचारियों के साथ भी मेरी दोस्ती है। उनके समारोहों में भाग लेते हुए भाषण देने के बहुत से मौके मुझे मिले हैं।

इस प्रकार मेरा घरेलू जीवन एक छोटे से घर की चहार दीवारों के भीतर सीमित नहीं है; परंतु वह तो बहुशाखी सांस्कृतिक पारिवारिक जीवन है। इस दृष्टि से देखें तो केरल की राजधानी में अपनी कुछ पहचान या स्वीकृति अवश्य है; साथ ही अपनी प्रसिद्धि भी है। मेरे लिए यह तो बड़े संतोष की बात है।

अठारहवाँ देवपद - अर्द्धविराम

1996 मार्च 31 को विश्वविद्यालय की अपनी नौकरी से मैं अवधि प्राप्त कर चुका था। लेकिन उस समय मैं तिरुवितांकूर देवस्वम बोर्ड का 'सन्निधानं' और आट्टुकाल भगवति मंदिर का 'अंबा प्रसादं' इन दोनों मासिक के प्रमुख संपादक का काम कर रहा था। इसके साथ ही मैं 'उल्लूर स्मारक' संस्था का अवैतनिक (Honorary) संचालक भी था। नौकरी से निवृत्त हो बीस साल के भीतर

ही भीतर मैं अपने पचास ग्रंथों का प्रकाशन कर सका था। उनमें से कुछेक का दूसरा संस्करण था। अपने साठवाँ वर्षगाँठ पर प्रकाशित किया गया 'देवयानं', सत्तरवाँ वर्षगाँठ पर प्रकाशित किया गया 'देवयानं', अपनी विद्यार्थिनी जयसुधा का खोज ग्रंथ 'डॉ वी एस शर्मा की कृतियाँ' आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। किळिमानूर श्री सी आर केरलवर्मा के रचित 'त्रैवेदिका संध्यापद्धति' की भूमिका; 'ब्रह्मसूत्र भाष्य' के अनुवाद की भूमिका आदि भी मैंने लिखा था। अनेक विचार-सम्मेलनों में (seminars) प्रस्तुत किए गए अंग्रेज़ी तथा मलयालम भाषा के अपने अनेक प्रबंध भी इसी बीच प्रकाशित किए गए थे। यह दुख तो अपने मन में ज़रूर है कि साहित्य और कला के क्षेत्र में मेरी जितनी देन हुई है सरकार की ओर से न तो उसका उचित मूल्यांकन हुआ है और न उनकी स्वीकृति हुई है। हाँ, यह तो बड़े संतोष की बात है जो मैं दिल खोल कर अब कह सकता हूँ कि ऐसे कोई आदर-सत्कार या मान्यता पाने के लिए मैंने कभी कोई प्रयास नहीं किया है।

महाकवि कालिदास ने कहा है कि 'प्रयोजनमनुदिश्य न मन्दोऽ पि पर्वतते'। मैंने बहुत काम किया है; अब भी मैं क्रियाशील हूँ और आगे भी ऐसा ही रहूँगा। निष्क्रिय कभी नहीं रहूँगा। जिस प्रकार अपने संतोष के लिए कोयल कूकता है और मयूर नाचता है न? उसी प्रकार मैं भी अपने मनपसंद कर्मपथ पर अग्रसर होता रहता हूँ। यही मेरे जीवन और कर्म की सफलता है। अपनी इस सफलता का चश्मदीद गवाह हैं मेरे अनगिनत ग्रंथ जिनकी रचना मैंने नौकरी से अवकाश प्राप्त होने पर की है। वे ग्रंथ हैं :- 1) 'डान्स आन्ट मूसिक ऑफ सौथ इंडिया' (Dance and Music of South India) - अपने ग्रंथ 'बालरामभरतं सरस्वति' का अंग्रेज़ी अनुवाद है यह। 2) 'हारमणि' (Harmony) अपने अंग्रेज़ी निबंधों का संग्रह है यह ग्रंथ। 3) 'महाभारतामृतं और 4) 'हरिवंश' - इन दोनों ग्रंथों का संशोधन कर भूमिका मैंने तैयार की है जो श्री मृढ़ानंद स्वामी के रचे हुए हैं। 5) 'शाण्डिल्य भक्तिसूत्रं' की टीका। 6) 'मूकपंचशति' की टीका। 7) 'रंगराजस्तवं' की टीका 8) 'गीतागोविंदं' की टीका। 9) 'चतुर्दण्डि प्रकाशिका' की टीका। 10) 'बृहदेशि' की टीका। 11) 'कुट्टनमितं' की टीका 12) श्री कुंचन नंपियार के ओट्टन तुळ्ळल की रचनाओं के अतिरिक्त रचनाओं की खोज, संशोधन और उसकी भूमिका लिखना। 13) अपना ग्रंथ 'श्री स्वाति तिरुनाल : जीवनी और कृतियाँ' का नया संस्करण। 14) श्री भोजदेव का लिखा 'शृंगारप्रकाशं' का मलयालम भाषा की लिपि में तैयार कर टीका सहित पुस्तक प्रकाशित करना। 15) 'भारत के नृत्य' नामक ग्रंथ का प्रकाशन यह तो अपने ग्रंथों की बहुत छोटी सी सूची है, अपनी सभी रचनाओं की सूची इस जीवनी के अंत में दी गई है।

अपने आदरणीय मित्र श्री डी अप्पुक्कुट्टन नायर के पुस्तकालय का मूल्यांकन कर रिपोर्ट देने को मुझसे कहा गया था। श्री डी सी किष़क्केमुऱि और श्री अय्मनं कृष्णक्कैमळ् की समिति ने ही मुझपर यह दायित्य सौंपा था। मैंने सारे के सारे पुस्तकों का विशद अध्ययन कर सरकार को यह निवेदन समर्पित किया कि ये सब अमूल्य पुस्तकें हैं अतः ये सब सुरक्षित रखी जायें।

अपनी नौकरी से अवधि पाने के बाद दो प्रमुख पद पर काम करने का मौका मुझे मिला था। एक तो बी एस आर बी याने Banking Service Recruitment Board का काम था और दूसरा था सेंट्रल लाइब्रेरी ऑफ केरला के उपदेशक समिति के अंग का काम। तीन वर्ष तक इन दोनों ओहदों पर मैंने काम किया था। अपना बहुत बड़ा सौभाग्य हुआ था कि इस अवसर पर आदरणीय श्री कैनिक्करा कुमार पिल्लै के साथ मैं काम कर सका था।

(क्रमशः)

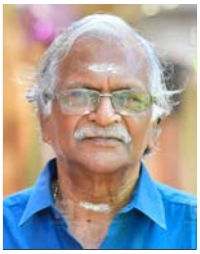

आत्मकथा

ज़िंदगी : एक लोलक

मूल : श्रीकुमारन तंपी

अनुवाद : डॉ.पी.जे.शिवकुमार

(पूर्वप्रकाशित से आगे)

वर्ष एक सौ बत्तीस। उस समय का लाख तो आज कितने ही करोड हैं। निरीह व्यक्ति। मेरे चाचाजी उसमें फँस गए तो आश्चर्य की बात है क्या...? इक्कीसवीं आयु की कळरिक्कल कृष्णन महोदय अपने बड़े चाचाओं के साथ हरिप्पाट्टु करिम्पालेत्तु घर में लड़की देखने आए। भवानिक्कुट्टि तंकच्ची भाई एवं माँ की जबरदस्ती के कारण सज घजकर आई। लड़का मद्रास मेट्रिकुलेशन अभी पास हुआ है। नौकरी कुछ भी नहीं है। दोनों भाई पढ़े-लिखे हैं। एक कलकत्ता जाकर स्नातक बननेवाला दंत डॉक्टर, उससे अधिक एम एल सी भी... मर जाने पर भी दूसरा भाई चित्रकार.... यह सिर्फ मेट्रिकुलेषन... देखने में भी उतना अच्छा नहीं है।

लड़की को देखकर, मित्रता दृढ बनाकर लडका एवं चाचा लौट गए। मूल परिवार से झगडे में कृष्णपिल्लै के रूप में बदले कृष्णन महोदय ने कहा - "मुझे इस लड़की को ही चाहिए।" किसी भी पुरुष को अपने भाई से तुलना करनेवाली भवानिक्कुट्टि तंकच्ची ने कहा : "मुझे यह रिश्ता नहीं चाहिए।" "क्यों?" मुख में ज़रा भी प्रसन्नता नहीं। एक दुष्ट की प्रकृति। जिस प्रकार धोती पहना हुआ था, देखा नहीं क्या? सब कुछ मोड़कर नाभि के स्थान पर अटक लिया है। एक टर्की टवल गले में लिपटाकर रखा गया है... परमशिव जैसे सर्प को गले में लिपटा लिया था.... दादी माँ को गुस्सा आया। "चुप रहो। वेश पर ज्यादा ध्यान देने के लिए वे नट या गायक कुछ भी नहीं है न। एकड़ों के खेत और ज़मीन का मालिक... ज़मींदार।" इस बार माँ ने बेटी का समर्थन नहीं किया। कुमारन तंपी आया। उनका सगा छोटा भाई देवस्वम् मैनेजर पी सी वेलायुधन तंपी आया। गौरिक्कुट्टी तंकच्ची और पति कुमारा पिल्लै आए। कार्त्यायनि तंकच्ची और दामाद वकील नीलकंठा पिल्लै भी आए। सारी ननदें भी आयीं। सामूहिक आक्रमण में माताजी अकेली रह गई... अंत में चाचाजी ने 'ओट्टमूलि' दवा (हरे पत्तों का दवा) का प्रयोग किया : भवानी, उन्नीस वर्ष की आयु तक इस खानदान में एक लड़की अविवाहित रही, यह सोचना भी अपमान है। तू आगे भी इस प्रकार खडी रहेगी तो किसी दूसरी शादी करनेवाला, या एक पत्ता भी न रखने वाले किसी नंपूतिरी ही शादी का प्रस्ताव लेकर आएगा। मैं जिसे तुम्हारे लिए ढूँढकर लाया हूँ, उसे तुमसे केवल दो साल उम्र में बड़े एक लाखपति को है, याद रखो। अगर हम पुत्तूर के महोदय लोग हैं.. पुन्नूर और पुत्तूर.... कितनी मेल है! अगर तू इससे असहमत होती है तो मेरे सामने एक ही रास्ता है... खुदखुशी करना....। मैं अंबासमुद्र में नहीं जाता हूँ।

मेरी पत्नी एवं बच्चे अनाथ हो जाए ... तेरे लिए मैं अपनी जान छोड़ दूँगा।" इस तरह दस साल की आयु से कल्पनाओं में मेरी माँ ने जिस राजकुमार को देखा था, उस स्थान पर कळरिक्कल कृष्णपिल्लै रूपी 'पुत्तूर महोदय' ने प्रवेश किया... उण्णित्तान, वल्यत्तान, तांडुकल आदि ओणाट्टुकरा के राजा (कृष्णपुरम को राजधानी बनाकर शासन किए कायंकुळं राजा) चुने हुए परिवारों को दिए गए पदनाम हैं। चाचाजी (ओप्पनोन) की आँसु और आत्महत्या की धमकी के आगे भवानी ने समर्पण किया।

प्रास विषय में पुन्नूर और पुत्तूर जिस प्रकार मिले थे, उसी प्रकार तंकच्ची एवं तांडुकल मिले नहीं। कृष्णन ताडुकल, कृष्ण पिल्लै के रूप में बदलने पर भी कोई प्रयोजन नहीं हुआ। डॉक्टर पद्मनाभन तंपी ने जो सपने देखे, विफ़ल हुए, चराई में पड़कर सुखाए गए नोट या एकड़ों की खेत या ज़मीन ने माँ की कभी भी सहायता नहीं की। सब कोरी मृगतृष्णा में बदल गईं। लेकिन अपने हिसाबों का गलत होना गीले सौ के नोटों का अपने को धोखा देना आदि को समझने के लिए समय ने शुद्ध हृदयवाले डॉक्टर पद्मनाभन तंपी को अनुमति नहीं दी।

समांतररेखाएँ

करिम्पालेत्तु ज़मीन पर दो मंजिलों में विवाह मंडप बना। पुन्नूर खानदान में उस पीढ़ी में अब दूसरी कोई शादी नहीं है। सारे मूल निवासियों को निमंत्रण भेजा गया। क्या हाथी के दुबला होने पर भी उसे अस्तबल में बांधा जाता है...?

उन्नीसवीं आयु तक एक लडकी बिन शादी किए खडी होने की सारी कमियाँ इस विवाह के धूमधाम में घुलमिल कर दूर होना चाहिए। ईर्ष्यालु लोग को फुसफुमाहट समाप्त करना चाहिए। पद्मनाभन तंपी ने अपनी सारी क्षमताओं का प्रयोग किया। श्रीमूलं असंब्लि में अपने साथ रहे निकट के दोस्तों को और प्रजा सभा के परिचितों को निमंत्रम दिया। रिश्तों एवं बर्ताव में स्थित गलत कहानियों को सुधारकर पुन्नूर शाखा एवं करिम्पालेत्तु शाखा मिल गए। इस तरह भवानिक्कुट्टि तंकच्ची और तोनय्क्काट्टु कळरिक्कल कृष्ण पिल्लै के बीच का विवाह अच्छी तरह संपन्न हुआ। करिम्पालेत्तु घर में प्रथम रात्रि। एक हफ्ते के बाद वधु और रिश्तेदार लडके का घर देखने तोनय्क्काटु के लिए रवाना होंगे। वहाँ एक दिन ठहरकर लड़का और लड़की, वधु के घर लौटेंगे। यही परंपरा के अनुसार वधु के घरवालों का लिया गया निर्णय था। लेकिन विवाह भोजन खाने का आलस्य दूर होने पर वर के पिता रूपी राघवन पिल्लै नामक पुत्तूर राघवन महोदय ने कहा।

"लडकी से जल्दी निकलने को कहो। संध्या से पहले कळरिक्कल पहुँच जाना चाहिए। लड़की के हाथों बनाया रात का भोजन ही आज हम सब खाने जा रहे हैं।" बहुमुखी प्रतिभावान रूपी डॉक्टर पद्मनाभन तंपी ने अविश्वसनीय भाव में लड़के के घरवालों को देखा फिर बहुत ही शांत होकर कहा - "हमारे परिवार में लडकियों की शादी कराके पति के घर भेजने की रिवाज़ नहीं है। लडके को इधर स्वीकार करने की ही रिवाज़ है।" तब वर के चाचा ने जवाब दिया : मेरी भानजी को भी मैंने उसके पति के घर नहीं भेजा। उससे शादी करनेवाला उचित न मालूम पडने पर उसके कपोलों को मारते हुए घर से निकाल भी दिया गया। (क्रमशः)

प्रश्नोत्तरी

डॉ. रंजीत रविशैलम

1. 'तुम विद्युत बन जाओ पाहुन, मेरे नयनों पर पग घर-घर' पंक्ति किसकी है?
2. 'कवियों की ऊर्मिला विषय उदासीनता' निबंध के लेखक कौन है?
3. बोली का लघुतम रूप क्या है?
4. प्रयोगवाद को 'बैठे ठाले का धंधा' किसने कहा?
5. किस मीमांसक ने साहित्य को 'जीवन की आलोचना' कहा?
6. 'दो आब' किसकी रचना है?
7. 'पद्मिनी चरित्र' किस कवि की रचना है?
8. 'मधुमती भूमिका' की परिकल्पना किसकी है?
9. 'मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है' - यह किसकी उक्ति है?
10. 'आज के सवाल और मार्क्सवाद' का संपादन किसने किया?
11. 'अगर कनुप्रिया वाला अनुभव न होता तो शायद बहुत पहले मैं इस जीवन से ही मुक्त हो चुका होता' - किसने कहा?
12. 'नील गाय की आँखें' किसका कहानी संग्रह है?
13. 'पथप्रज्ञा' किसका ख्यातिप्राप्त उपन्यास है?
14. 'महामानव महापंडित' जीवनी की रचनाकार कौन है?
15. "निबंध गद्य की कसौटी है।"-यह किसका विचार है?
16. रससूत्र की अभिव्यक्ति की व्याख्या किसने की?
17. 'दिव्य प्रबंधम्' में किसकी रचनाएँ संकलित हैं?
18. 'चित्ररेखा' किस कवि की रचना है?
19. 'तरंगिणी' गद्यगीत का रचनाकार कौन है?
20. पंत जी की 'ज्योत्स्ना' पर किसका प्रभाव लक्षित किया जाता है?

प्रश्नोत्तरी उत्तर

1. महादेवी वर्मा
2. महावीर प्रसाद द्विवेदी
3. वर्ण
4. नंददुलारे वाजपेई
5. मैथ्यू अर्नोल्ड
6. शमशेर बहादुर सिंह
7. मुबारक
8. केशव प्रसाद मिश्र
9. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी
10. अजय तिवारी
11. धर्मवीर भारती
12. नमिता सिंह
13. वीणा सिन्हा
14. कमला सांकृत्यायन
15. रामचंद्र शुक्ल
16. अभिनव गुप्त
17. आलवार
18. जायसी
19. वियागी हरि
20. मैंतरलिक रचित 'दि ब्लू बर्ड'

क्रिस्तुमस समारोह के विविध दृश्य।

RNI No. 7942/1966
Date of Publication :15-01-2026
Date of posting : 20th of Every month

KERALJYOTI

JANUARY 2026

Vol. No. 62, Issue No.10
Regn. No. KL/TV(S) 381/2025-2027
Price Rs. 40/-

A monthly Publication of Kerala Hindi Prachar Sabha approved for School Libraries by the Education Dept., Govt. of Kerala as per notification No. B-3 / 4036/83 SIE dated 20-9-1985
Approved by University of Kerala as per order No. Ac. A II / 1 / 31965 / Std. Journals/2013 / dtd : 27-6-2013

आर्ष साहित्य परिषद् एवं केरल हिन्दी प्रचार सभा के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित विचार सत्र और पुरस्कार वितरण समारोह का उद्घाटन दीप प्रज्वलित करते हुए केरल के राज्यपाल माननीय राजेन्द्र आरलेकर जी।

बहु भाषा भारती पुरस्कार और बहु भाषा कैरली पुरस्कार प्राप्त करते हुए डॉ.लतिका चावडा (वर्धा, महाराष्ट्रा) और श्री. सजय कुमार पी.एस., (आट्टिंगल, तिरुवनन्तपुरम)।

केरल हिंदी प्रचार सभा, तिरुवनंतपुरम-695014 के लिए मंत्री अ.व.डॉ.मधु बी द्वारा प्रकाशित, राष्ट्रवाणी मुद्रणालय केरल हिंदी प्रचार सभा, तिरुवनंतपुरम-695014 में मुद्रित डॉ.एम.एस.विनयचन्द्रन व डॉ.रंजीत रविशैलम द्वारा संपादित

Published by the Secretary, Adv. Dr. B. Madhu for Kerala Hindi Prachar Sabha, Tvpm-695014
Printed at Rashtravani Mudranalaya, Kerala Hindi Prachar Sabha, Tvpm-695014 & edited by Dr.M.S.Vinayachandran and Dr.Renjith Ravisailam